

NAINI TAL
Class no.
Book no.
4166

बौने और घायल फूल

[सामाजिक उपन्यास]

डा० रांगेय राघव

विनोद पुस्तक मन्दिर
हॉस्पिटल रोड, आगरा

प्रकाशक—
राजकिशोर अग्रवाल
विनोद पुस्तक मन्दिर,
हास्पिटल रोड, आगरा।

मुद्रक—राजकिशोर अग्रवाल, कैलाश प्रिंटिंग प्रेस,
बाग मुजफ्फरखां, आगरा।

भूमिका

'बौने और घायल फूल' मेरा एक सामाजिक उपन्यास है। इसमें मेरे वही विचार व्यक्त हुए हैं, जिन्हें कला के दृष्टिकोण से मैंने नये ढंग से अपने ग्रन्थों में प्रतिपादित किया है। यदि पाठकों को यह पसंद आयेगा, तो मेरा श्रम सफल होगा।

रांगेय राघव

मूल कथा

[एक दास्तान सुनाने आया हूँ, हजार झंझट हैं। शेर भी शर्मा जाए ऐसी आदत है पलट पलट कर देखने की। जो हो, ध्यान लगाइये, अर्ज़ यह है कि छोटी सी कहानी का आरंभ करता हूँ—]

बौने और घायल फूल

शहीद की विधवा

बादलों की छाया, उनींदा उनींदा दिन ।

'तपस्विनी कमला देवी यहीं रहती हैं ?'

'यहाँ तो श्यामलाल की बहन रहती है ।'

'अरे कौन है ।' भीतर से स्वर सुनाई दिया ।

'मैं हूँ सुरेश ।'

'आइये सुरेश जी ! अहोभाग्य आपके दर्शन हुए । बहुत दिन से सुनता आरहा हूं कि राजाशाही से टक्कर लेने वाले कौन ? सुरेशजी । माँ ! सुरेश जी आये हैं ।'

द्वार पर एक स्त्री ।

'कहाँ हैं ?'

'ये हैं तो !'

'अरे !' स्त्री विस्मय से कह उठी ।

सुरेशजी के शुष्क मुख पर एक फीकी मुस्कान सी दिखाई दी ।

'नमस्कार !'

'नमस्कार ! आइये ! हम गरीबों की भी याद आई ।'

'भूलने वाली बात तो वह हो जो कभी मस्तिष्क से हट भी गई हो ।'

हहह····

आइये···

आइये···

सुरेशजी ने प्रवेश किया। युवक सामने बैठा। स्त्री एक किनारे खड़ी रही। द्वार में से कुछ गाँव वाले झाँक रहे थे।

एक ने धीरे से कहा: 'यह कैसे आया है आज !'

'अजी एक ज़माना था जब यह बड़ा ऊँचा नेता था !'

'मगर इसे अब कौन पूछता है ?'

'न पूछे, मगर अब भी काँगरेस के लिए इसकी जान हाजिर है।'

'ओहो ! न करे तो खाये क्या ?'

'अरे यही था जब राजा ने जेल में डाल दिया था तो इसने नाकों चने चबवा दिये थे।'

'पर यह आया क्यों है ?'

'कुछ इसी कमला की चाल होगी।'

'बड़ी चालबाज़ औरत है। दुनिया की आँखों में सती, और वैसे····

'रहने दो यार, तुम्हें तो कोई काम ही नहीं। दौलत थी पास, जो निभा ले गई अपने पत को, अब वह देखो न उसको हाँ, कह दूँ ?'

भीत युवक ने कहा: 'माँ ! सुरेशजी ने बड़ी कोशिश की कि मुझे नौकरी मिले। परमेश्वरजी के पास खुद लेगये और काम कराके छोड़ा।'

'हाँ बेटा ! सुरेशजी का अहसान आज का नहीं, सदा का है। उसे क्या मैं भूल सकती हूँ ?'

'और सुरेशजी! माँ का हाल न पूछिये। इधर चार दिन से तो इनका प्रोग्राम ही स्वर्गीय पिताजी की याद में आँसू बहाना होगया है!'

'आह! या याद दिलाते हो! नीलकांत! शहीद नीलकांत! वाह! क्या दिव्य पुरुष था!'

स्त्री आँखें पोंछ कर भीतर चली गई।

'सुरेशजी! माँ का दिल बड़ा नरम है।'

'अच्छा, सुनो! जल्सा कल है। ज़बर्दस्त मीटिंग होनी चाहिये। प्रान्त के बहुत बड़े नेता हैं परमेश्वर जी!'

'क्यों नहीं! आज़ादी मिलने के बाद तो उनका नाम सब जगह फैल गया है। अरे हाँ! एक बात तो मैं कहना ही भूल गया।' फिर अत्यंत विनीत स्वर: 'कल आप और परमेश्वर जी इसी गरीबखाने में जो कुछ रूखासूखा हम इकट्ठा कर सकें, ग्रहण करके हमें कृतार्थ करेंगे।'

'अरे इसमें इतने संकोच की क्या जरूरत है? आप परमेश्वर जी से चलकर मिल लीजिये, वे सायंकाल आजायेंगे।'

'मेरे अहोभाग्य! माँ! परमेश्वर जी कल हमारे यहाँ भोजन करेंगे।'

स्त्री फीका हास्य हँसकर बोली: 'राजभोगों के खानेवालों को हमारे यहाँ क्या पसंद आयेगा भला?'

'वाह', सुरेश जी ने कहा—'आप क्या कहती हैं। अरे, इस पवित्र घर में रूखा भोजन भी किसी पापी के पकवान से बढ़कर है!'

फिर दो हास्य, एक मुक्त, दूसरा संकोचग्रस्त।

गाँव की स्त्रियों में कूएँ पर बात चल पड़ी।

'जीजी सुना ?'

'क्या भैना ?'

'कमला के भाग फिर गये।'

'हाँ बहू पिंसन मिलेगी।'

'बिचारी ने बहुत दिन दुख पाया।'

'ऐसा दुख मैं भी पाती।'

फिर खिलखिलाहट।

'ऐ हटो भी ! तुम्हें ठिठोली सूझती है।'

चौपाल पर पेंशनयाफ़्ता आबकारी के मुंशी जी हुक्का लिये बैठे थे। बोले: 'बामनों की नाक ऊँची रही। अब ये साले बनिये क्या कर लेंगे। रोक लेंगे ?'

'अजी धरम की मार ! अभी तो नेहरूजी बामन ही है जो हिन्दुस्तान की राजगद्दी पर बैठा है।'

जब यह खबर परचूनिये सोहनलाल के पहुँची आँख मार कर लाला हरदयाल से बोला : 'सुन लिया ! फिर कहते हैं। अब हिंदुस्तान का धरम कानून बामन बनाते हैं कि भंगी।'

उसका मतलब अम्बेडकर से था।

एक ठहाका।

गूजरियों का गाना सुनाई पड़ा।

'कौन गारही हैं !'

'कांगरेस गवा रही है।'

'अजी, बहती हवा है, बहुत देखी है। क्यों जी ?'

'हाँजी ! भेड़ पर ऊन कोई नहीं छोड़ता ।'

'भाइयो, आप क्या कहते हैं । देखिये कांगरेस के ज़माने में आप इतना बोल लेते थे ? राजा के ज़माने में आपको यह आजादी थी ।'

'सो क्या हुआ ? लगान न बढ़ा दिया, तमाकू का टैक्स नहीं बढ़ा दिया । ऐसे बोलने भी न देंगे, न ऐसे राजा के जाये हैं । दो दो कौड़ी के टुपिया ।'

फिर माइक्रोफोन पर गूँजता स्वर: भाइयो और बहिनो ! मैं जय बुलवाऊँगा । आप बोलिये ।

भारतमाता की…

जय !

महात्मा गांधी की…

जय !

पण्डित जवाहरलाल नेहरू की…

जय !

शहीदों की…

जय !

प्रान्त के तपस्वी वीर बलिदानी परमेश्वर जी की…

जय !

वीर नन्दराम जी की…

बीच में एक बोला: क्या जय बुलवाने को लौंडे लपाड़े इकट्ठे करवा लिये हैं ।

क्या बनें इन जयों से !

आप भी बोलिये सा'ब! आप क्या हुकूमत के खिलाफ हैं ।

नहीं सा'ब हम तैयार हैं—जय !

अजी कांगरेस तो फिर कांगरेस है ।

फिर मंदा स्वर: जीप है, जीप ।

अब पैदल नहीं चला जाता,

जेलयात्रा के अनुभवी साधु दिवाकर जी की…

जाने साले किसकी …अरे हाँ…जय !

भों…भों…

हट जाइये, हट जाइये…

तपस्वी परमेश्वर जी की…

जय ! जय ! जय !

गगन भेदी नारे ।

स्त्रियाँ निकल आईं ।

फिर वही स्वर: हाँ भाइयो ! जय बोलिये ।

घर्रर घर्रर…माइक ठीक करिये । हाँ भाइयो । हलाई मनसुखदास की…

जय…

टालवाले घूरेलाल की…

जय…

परमेश्वरजी ने धीरे से कहा : बस अब बंद कीजिये बहुत हो लिया…

बस बाबूजी ! अब सात आठ जयें और रहीं हैं, इनसे सबका प्रतिनिधित्व ठीक होजायगा…

परमेश्वर जी परेशान । फिर ताँता लगा,

पण्डत हरेतीलाल की…

जय…

अब लोग बातें करने लगे। बच्चों की जय सुनाई दे जाती फिर गलबा सा होजाता।

आखिर में क्षीण स्वर में भर्राये गले से बोलने की आवाज़ निकली—शहीद नीलकांत की…

बहुत हल्की सी…जय…

आइये परमेश्वर जी आप थक गये हैं, तनिक विश्राम कर लीजिये…

नहीं मैं अभी नहीं थका हूँ…

कैसी लगन है। इसे कहते हैं देशसेवा। बाबूजी ने कभी देश के काम में तो थकना ही नहीं सीखा एकबार और जय… जाने वह भोलानाथ बेवकूफ़ मौके पर कहाँ चला जाता है…अब यह मौका था…

तभी सुनाई पड़ा :

पहले नाऊँ लेउ गनपति का…

नये ज़माने का आल्हा होने लगा।

परमेश्वरजी ने अपने रिमलैस चश्मे में से देखा और सामने एक तरुण को देखकर कहा: अच्छा आप आगये। सुरेश जी कहाँ है ?

एक कार्यकर्त्ता ने कहा: पता नहीं, जाने कहाँ निकल जाते हैं…

'निकल कहाँ जाते हैं।' कठोर स्वर सुनाई पड़ा।

देखा सुरेश जी थे। कार्यकर्ता के दाँत खिसियान पट्टी में निकल आये।

सुरेशजी ने कहा: 'दाँत या निकालते हो। कलके लड़के! अरे जब तुम पैदा भी नहीं हुए थे तब सुरेशजी ही आन्दोलन को आगे बढ़ाते थे। हमने अपने जीवन का बलिदान...'

परमेश्वर जी ने काट कर कहा: 'जाने दीजिये सुरेशजी ! आप कमलादेवी से मिल आये।'

सुरेश ने ऊपर के दाँत निकाल दिये। प्रसन्न हो उठे। बोले: 'क्या कहते हैं परमेश्वर जी। बड़ी सती हैं। मैंने कहा आपका नाम तो आदर से सिर झुका लिया...'

'मीटिंग में कितना समय है...'

'अभी दो घंटे हैं...'

'चलिये कमलादेवी के दर्शन कर आयें...'

भीड़ सरकी।

तरुण ने घर के द्वार पर पुकारा : 'माँ !'

कोई उत्तर नहीं।

'माँ !'

फिर कोई उत्तर नहीं !

कहाँ गई ?

घर खुला है !

कोई भी नहीं !

आखिर बात क्या है ?

युवक स्तब्ध खड़ा रहा। वह एक खादी की बुशशर्ट और खादी की पतलून पहने था।

पड़ौस की एक स्त्री ने कहा : 'मुन्नू भैया ! किसे पूछते हो !'

'माँ को।'

'घर में नहीं हैं ?'

'नहीं।'

'ताला बंद है ?'

'नहीं।'

'अरे !'

वह भी आगई।

एक और, एक और।

मजमा।

'माँ नहीं हैं।'

भीड़ में से स्वर : 'अभी मैंने उन्हें खिरकारी वाले महादेव की तरफ जाते देखा था।'

'ठीक है, ठीक है, कोई बात नहीं, कोई बात नहीं।'

भीड़ छँट गई।

युवक भीतर चला गया।

नहा धोकर सफेद धोती में लिपटी वही स्त्री महादेव के प्रशाँत आलय में बैठी कह उठी : भगवान ! जब यह इज्जत मिलती है, तब कुछ चला जाता है, अब क्या जावेगा ? यही लड़का तो मेरा एक सहारा है और है ही क्या ?

महादेव की तरफ से कोई जबाव नहीं।

फिर उसी ओर से बातचीत : बाबा भोलेनाथ ! मेरी रक्षा करो। पापिन हूँ तो उसका दण्ड मुझे देना। उसे नहीं।

फिर भी वही सूखी टाल।

छायावाले पेड़ पर पिड़कुलिया बोली और तब सन्नाटे में खुटकबढ़ई की आवाज। स्त्री उठ खड़ी हुई !

वह चलने लगी।

जब वह महंत चंदनदास जी के सामने—'पालागन' कह कर झुकी, उसकी आँखों से आँसू की बूँदें नीचे टपक पड़ीं।

महन्त जी ने चौंक कर इधर उधर देखा और किसी को न पाकर कहा: 'क्यों कमला ! क्या बात हुई।'

कमला स्तब्ध खड़ी थी।

आँसू पोंछ लिये।

'क्यों रोती हो ?'

'भाग को !'

'भाग तो तुम्हारा मुझ जैसा सदा अंधेरा नहीं है, देखो उसमें अब उजाला आ रहा है।'

'तुम भी यही कहोगे महाराज !'

'क्यों ?

'किसलिये हो रहा है यह सब !'

'तुम्हारे पति के लिये।'

स्त्री ने ग्लानि से सिर झुका कर नीचे का होठ काट लिया।

महन्त जी ने फिर कहा: 'पाप वह है जो दूसरों की हानि करे। उसके अतिरिक्त कुछ नहीं।'

'इतने बड़े पण्डित होकर कहते हो ?'

' पढ़ा है तभी कहता हूँ। दूसरों का पेट काटना पाप है।'

'तो यह जो ब्याज पर रुपया देते हो……'

'यह पाप नहीं है।'

'तिब्याजा नहीं लेते ?'

'समाज की मर्यादा है। आज रुपया रुपया उगलता है। मैं क्या करूँ ?'

'ठीक कहते हो महाराज ! भाव और न्याय भगवान के घर से आता है।'

'तुम्हे अपने पुत्र का ध्यान रखना है। हमें समाज का ध्यान रखना ही है, भले ही वह कसाई ही क्यों न हो !'

'मैं जाऊँगी।'

'सारी जिन्दगी मजबूर रहा हूँ। और मजबूरियों के समझौते को ही जिंदगी मानता रहा हूँ। तिस पर मर्द हूँ, तुम तो खैर, फिर भी औरत हो !'

'जाती हूँ।'

स्त्री धीरे-धीरे चली गई।

दुपहर होगई।

युवक ने कहा : 'माँ खाना तैयार है ?'

'हाँ बेटा।'

'लो वे आगये।'

भीतर प्रवेश किया परमेश्वर जी ने आगे, पीछे पीछे एक कार्यकर्त्ता, फिर नंदराम जी। तब सुरेशजी।

'नमस्कार !'

'नमस्कार !'

'आपने पहँचाना !'

'भला न पहचानूँगा ।'

दोनों ने एक दूसरे को देखा, फिर दृष्टियाँ हट गईं।

स्त्री ने कहा : 'आप आये, हमारे भाग खुले । आज का अहसान नहीं, लगता है पुरबिले जनम तक का है ।'

'क्या कहती हैं कमलादेवी । नीलकाँत मेरे मित्र थे ।'

'वह मैं न जानूँगी तो कौन जानेगा । बैठिये ।'

'हाँ-हाँ...।'

लड़के खाना ले आये ।

'यह बच्चे ।' परमेश्वर जी ने पूछा ।

'मेरे भाई के हैं । यह हैं मेरे भैया श्यामलाल जी...बड़े हैं...आप...

एक व्यक्ति ने दोनों हाथ जोड़कर बड़े ही विनीत स्वर में दुमहिलाती हुई मुद्रा में आँतरिक प्रसन्नता प्रगट करते हुए कहा : 'मैं जानता हूँ । कौन नहीं जानता ? सारा देस जानता है । अहा ! कैसी तपस्या है । देखकर ही आँखे ठंडी होगईं ।'

स्त्री एक बार परमेश्वरजी की ओर देखकर आँखें फिरा कर बोली : 'मैं तो बच्चा लेकर गाँव चली आई । सुना करती थी आप जेल जाते थे ।'

अचानक परमेश्वरजी ने मुड़कर कहा : 'अरे भाई देखो ! किसी को डाकखाने भेजो । वहाँ पी. सी. ओ. से फोन कराके जरा तलाश करवाओ कि केन्द्र से जो वह कमीशन आने वाला था जाँच करने को तकावी के मामले की नयी योजना की, वह कब तक पहुँचेगा ।'

'दिवाकर जी चले जायेंगे ।'

'नहीं, सुरेश जी आप ही का जाना ठीक रहेगा, आप ही कष्ट करेंगे ?'

'जी हाँ, कहिये, मैं हाजिर हूँ ।'

'तो आप फोन कीजिये कि परमेश्वरजी कल तो किसानों के विराट जलसे में रहेंगे, उन्हें परसों ही फुर्सत रहेगी ।'

'अभी लीजिये ।'

सुरेश जी चले गये ।

'हाँ', परमेश्वर जी ने कहा : 'आपके वे कुछ और रिश्ते-दार थे...'

'जी हाँ ।' स्त्री ने कहा—'वे मजे में होंगे । मैं जब कुछ दिन को उनके साथ चली गई थी वे आपको बहुत याद करते थे । कहते थे : आदमी नहीं परमेश्वरजी देवता थे । आपने भी उन्हें सुधारने को क्या क्या कष्ट नहीं उठाया !'

परमेश्वरजी ने दूसरी बात छेड़ी : तो अब तो यह नौज़वान भी तैयार होगया । कितना छोटा सा था तब !'

श्यामलाल ने खीसें निपोरीं ।

युवक कुछ लजा गया ।

'अब तो कमला देवी ।' परमेश्वर जी ने रुककर कहा : 'आपकी जिम्मेदारी दूर होगई । अब आप कुछ राजनीतिक कार्य करिये न ?'

'अब मुझसे क्या होगा ।' कमला ने परमेश्वर को देखकर मुस्कराते हुए कहा:—'मैं तो डरपोक ठहरी । मुझसे तो आपको याद है तभी नहीं हुआ । हमारी नन्द तो हिम्मत की

थी। उन्होंने तो आपकी राजनीति में पूरा हाथ बँटाया था, पर फिर बीच में छोड़कर चली गईं। और फिर अब तो देश स्वतंत्र होगया !'

परमेश्वरजी ने हँसकर कहा : 'देश स्वतन्त्र हुआ, मगर अभी असली आजादी कहाँ आई, अभी तो रजवाड़ों और अँग्रेजों की दिमागी गुलामी बाकी है ! उसके खिलाफ तो हमें लड़ना ही है।'

सुरेशजी आगये।

'अब पहले खाना खा लिया जाये। देर हुई परोसे भी।'

'मैं तो कहने ही वाली थी।'

'शूरू कीजिये सुरेशजी ! आप हमारे वयोवृद्ध हैं।'

'हैं हैं हैं। मैं तो कार्यकर्त्ता हूँ। मेरा ध्येय तो सेवा है। आप नेता हैं, आप शुरू करिये, हम तो पीछे हैं···

खाना शुरू होगया।

'आप इस जीवन से ऊब उठेंगी अब', परमेश्वरजी ने कहा : 'पुराने कार्यकर्त्ताओं को हम सरकार से मदद दिलवा रहे हैं। सुरेशजी को शायद मिल जाये। यहाँ नहीं तो सर्वो-दय में तो हो ही जायेगा। आप भी···'

स्त्री ने कहा : 'अरे इधर पूरी डाल। मुन्नू ! तू पानी दे ! लारे पंखा मुझे दे। कितनी मक्खियाँ आगई हैं।'

बाहर गीत सुनाई पड़ा···

शहीदों के मजारों पर
जुड़ेंगे हर बरस मेले···

जत्था बढ़ गया।

अमर शहीद नीलकाँत की·····

जय !

कमला की आँखें भर आईं । परमेश्वरजी ने कहा : 'दही-बड़े अच्छे बने हैं ।'

कमला ने आखें पोंछकर कहा : 'और लादे भीतर से ।'

'कमला देवी ! जो हैं उन्हें देखकर हिम्मत रखिये ! अब जी हलकान करने से क्या फायदा !'

कमला मुस्कराने की चेष्टा करने लगी ।

बाहर : नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की

जय····

आज़ाद हिंद फौज के वीर सेनानियों की····

जय····

सांझ होचली ।

खचाखच भीड़ ।

शहीद नीलकाँत की····

जय····

'भाइयो !' परमेश्वरजी ने कहा—'अब आपके सामने अमर शहीद नीलकाँतजी की धर्मपत्नी कमलादेवी आकर आपको धन्यवाद देंगी ।'

'उठो मां ।'

'मैं बोलूँ ?'

'और कौन बोलेगा ?'

'नहीं, नहीं, मुझसे नहीं····

'आप आइये तो कमलादेवी····' परमेश्वर जी ने कहा ।

कमला खड़ी हुई। पैर काँप रहे थे। हाथों में पसीना आ गया था। माइक वाले ने माइक सामने कर दिया।

'भाइयो और बहनो....

आवाज़ अपने ही कानों को सुनाई दी।

क्या वह स्वयं बोल रही थी !

क्या उसी की आवाज़ को सब सुन रहे थे !

सब खामोश थे !

लेकिन अब वह क्या कहे !

'आज....आप लोगों ने अमर शहीद की याद में मीटिंग की। आपको मैं धन्यवाद देती हूँ।'

बस !

बैठ गई !

सीईई ई... एक सीटी की आवाज़....

फिर औरतों की काँए काँय, बच्चों की चबर चबर....

'खामोश !!!'

'खामोश !!!'

सपना सा आया था वह चला गया। रात की अँधेरी होगई। सन्नाटा, बादलों की टकराहट, बिजली की चमक। कभी कभी टिटहरी की टिटकारी।

कमला खाट पर लेटी सोचने लगी।

सामने कौन था वह !

नीलकाँत !!

आगये हो !

आज !

इतने दिन बाद !

मुझ से दूर क्यों हो । मेरे पास आओ ।

यह तुम्हारे मुँह पर व्यंग की सी हँसी क्यों है ?

अच्छा मैंने बेटे को बड़ा नहीं कर दिया ?

क्या मैंने तुम्हारा काम पूरा नहीं कर दिया ?

क्या मैं झूँठ कहती हूँ ?

बादलों का थपेड़ा, हवा की पूँछ घने पेड़ों के पत्तों पर पटकी जाने लगी ।

कमला खोल कर उठ बैठी । पानी पिया । फिर भी चैन नहीं आया ।

अचानक बिजली चमकी ।

'कौन ?'

'मैं हूं, माँ ।'

'सोया नहीं न'

'पानी पीने उठा था । तुम नहीं सोईं ?'

'सोऊँगी ।'

फिर कोई बात नहीं ।

कमला फिर सोने लगी ।

अबकी बार कौन आया ?

वही ? तुम !! फिर क्यों ?

मैं तुम्हें छोड़कर कहाँ जाऊँ ?

इतने दिन से तो तुम यहां कभी नही आये ?

तब तेरा पुत्र तेरे से दूर होगया था। जब वह पास था तब नासमझ भी था। अब तुझे सँभलना होगा।

सँभल जाऊँगी, पर क्या तुम मुझसे घृणा करते हो ?

कोई उत्तर नहीं। अंधकार। घोर कालिमा। केवल अभ्राच्छादित व्योम में निस्तब्ध जलसंघात की पेड़ों के कंधों पर साँय साँय, उसमें कभी कभी चमक जाता हुआ पटबीजना।

बौनोंसी धरती उठने लगी आकाश का रस छूने····

कौंध कौंध गई बिजली, देखने को लगती थी जैसे थी कोई घायल फूल········

कमला ने फिर आँखें मींचली और तकिये को आगे करके उससे मुँह छिपा लिया। रात भी न जान सकी कि वह रुई की बँधी पर्त्तों के भीतर लोहू को पानी बना रही थी····



परिशिष्ट-एक

[छोटी कहानी का आरम्भ हो चुका। यह उसकी पृष्ठभूमि है। इसको न भी पढ़ा जाये तो नुकसान ही क्या है ? यों इन्सान और मुर्गे की एक आदत पुरानी है, कि दोनों घूरे पलट कर हीरा यानी दाना खोजते हैं। लिहाजा मौजूद है। इसको पढ़ कर रुकिये नहीं। मुझे अपनी कहानी सुनाने की ज्यादा इच्छा है, इसलिये उसी तार को पकड़ लीजियेगा···

छोटी गली की मामूली कहानी, बोझिल बयान

सड़क के मोड़ पर नुक्कड़ के दीपक जैसे, गली के छोटे से घर में मैली दीवारों की छाया में मुन्नू नहा धोकर अपने खिलौनों से खेलने लगा। नीचे शशि ने आवाज़ दी तो दौड़कर अपनी दोस्त के पास चला गया। पड़ोस बचपन की दोस्ती का ध्यान होता है। शशि मुन्नू से दो साल बड़ी, पनीली आँखें, माथे पर झूलते बाल, आँखों में सरलता, बालों में घुंघरवाल छाया।

शशि ने कहा: 'मुन्नू ! तेरे ठाकुर जी कहाँ हैं ?'

मुन्नू ने कहा: 'मन्दिर में।'

वह दादी के कमरे की चौकी पर सजा मंदिर था, बाल-कल्पना का शृंगार जिसे असली और नकली में भेद नहीं, क्योंकि प्रत्येक बालक अपने को आदमी की नकल समझता है, भविष्य का उत्तराधिकारी।

शशि ने कहा: 'ला उठा ला। मैं फूल लाई हूँ, देख ये मुमबत्ती''''सिंगार करेंगे'''

दादी एकादशी व्रत की कथा सुनने रामजी के मन्दिर में गई थी। इस समय काल की रस्सियों से घिसे पनघट सी दादी का आश्रम पीतल की रामलक्ष्मण की मूर्तियों पर से हट गया था। बालक ने उन्हें सहज आतुरता से उठा लिया और नीचे चला।

मां ने देखा तो आश्चर्य, आतंक और भय प्रदर्शन की मुद्रा में कहा: 'कहाँ ले जा रहा है रे इन्हें ?'

माँ की ममता की दीवार इतनी मोटी थी कि उपदेश की बात उसे नहीं भेद सकी। बालक ने कहा: 'नीचे शशि मंदिर बनायेगी, वहीं। नये फूल लाई है।'

माँ ने झांक कर देखा, ताजे फूल। सुकोमल बच्ची। सनातन सौन्दर्य को लेकर जा रहा था एक चंचल बालक। प्रभात की किरन ने कमलों के सरोवर में कंचन सा भर दिया। वह क्षण भर मुस्कराई मानों भीतर से एक हिलोर उठी और कोई अनजान स्वप्न भव्य होकर जागरूक हो उठा। वह कुछ नहीं कह सकी। बालक ने मूर्त्तिस्थापित करदी। माँ ने देखा बटलोई में दाल उफनने को आगई थी।

माँ उदास नहीं। उसके भीतर उल्लास था। अनेकों कल्पना के चित्र आते थे, जाते थे। उनका कोई अन्त नहीं।

आयेंगे वे ! कितना सम्मान होगा उनका ! विजेता की तरह ! मालाएं, फूल, मोटर···जय जयकार···और वह गर्व से देखेगी, उसका पति···इतना महान···कितने सुन्दर लगेंगे वे··· मुस्कराते हुए ऊँचे मंच पर चढ़कर भाषण देंगे···लोगों के हाथों से तालियाँ बजेंगी···और तब···गगन भूल जायेगा···घर घर में चर्चा होगी···

दाल उफनी फिर ! उफान कभी नहीं रुकता।

लेकिन अबकी बार कह दूँगी कि मुझे अकेली छोड़कर न जाया करो। उनके बिना मुझसे नहीं रहा जाता···

स्त्री की क्षुद्र कल्पनाएँ। पति की महानता में आत्म-

वंचना, प्रेम की गलन में अपना समर्पण···

स्वप्न टूट गया ।

'माँ !' बालक सामने खड़ा हँसता हुआ कह रहा था : 'दाल उफन गई !'

वह भी हँसी । फिर कहा: 'आ बेटा रोटी सेकती हूँ, खाना खाले ।'

बालक ने कहा: 'पहले ठाकुरजी को माँ ! मन्दिर बन गया है, बड़ी जोर का । मैंने निहला दिया है उन्हें । ठाकुरजी को बड़ी जोर की भूख लगी है···'

माँ हँसी । कहा: 'तो फिर खिलाकर जल्दी आजाना ! हाँ ! यह ले ! गिराना नहीं । समझा ?'

नयनों का स्नेह और बड़ा । और व्यापक ।

रोटी भी सिक गई, पर मुन्नू का पूजन अभी समाप्त नहीं हुआ ।

'अरे आया नहीं ?'

और भी पतली आवाज का उत्तर: 'आया माँ ।'

मुन्नू का घोड़ा एक मिनट में १०० मील दौड़े, और शशि का हवाई जहाज जब उड़े तो घोड़ा बिचारा टुकुर टुकुर ताके···फिर फ़ुर्सत कहाँ ?

इतने में आवाज आई: शशि ! चल बेटी ! तेरे बाबूजी खाने को वुला रहे हैं···कमला कहाँ है ?

'यह हूँ ।' माँ उठी और छज्जे पर से कहा: 'शशि को खाने की याद कहाँ शीला बहिन जी !'

शीला भी हँसी । कमल भी । कमला अठारह की, शीला

चार बरस बड़ी।

शीला ने मुस्करा कर कहा: 'क्यों बहिन ! नीलू बाबू तो बड़ी धूम से लौट रहे हैं !'

कमला ने उल्लास से काटा: 'ऊपर आओ न बहनजी ! तुम्हें तो फुर्सत ही नहीं मिलती !'

शीला मुस्कराती रही। कहा: 'दोष लगाती हो। पर अब तुम्हें ही फुर्सत नहीं मिलेगी बहन ! वे अभी आये हैं न ? फिर आऊँगी। नीलू बाबू के सत्याग्रह की हर जगह चर्चा है। हरिजनों को साथ लेकर मन्दिर में घुस ही गये !'

कमला की छाती में गर्व की हुमक। नम्र बनकर अहंकार अपना वैभव दिखाता रहा।

'मारपीट होगई,' शीला ने कहा। 'हाँ ! पता नहीं, क्या होता है। सब गाँधीजी की जै बोलते हैं, पर अपने पर आती है तो कान पर जूँ भी नहीं रेंगती, कहते हैं, यह भंगी चमार गंदे हैं, एकदम कैसे मिलाये जा सकते हैं ?'

कमला को आतंक का कंपन मिला। पूछा: 'खबर आई है ?'

'अखबार में छपी है।'

अखबार ! कमला विश्वास नहीं कर पाती। पति का फोटो भी छपा है क्या ? संकोच पूछने नहीं देता।

शीला का स्वर उठता जारहा था: 'अरी मारपीट का क्या ? मर्दों को काम ही ऐसा कौनसा है ? बाजार चलते हाथ पटकते हैं ! दरद नहीं आता। मगर पुलिस आगई। झगड़ा बच गया, नहीं तो कहते हैं जानें चली जातीं।'

कमला ने सोचा यह नेतृत्व कैसा ? इसमें विनाश भी है।

शीला कहे जारही थी: 'पर शहर में सभी पार्टियाँ उनके स्वागत की तैयारियाँ कर रही हैं। शायद शाम तक सभी आजायेंगे और शशि के बाबूजी भी हँस कर कह रहे थे कि आने दो नेताजी को ! हम भी एक बड़ा सा हार पहनायेंगे !'

खिलखिल, खिलखिल !

कमला बोली: 'वे तो मजाक ही किया करते हैं !'

अंग अंग प्रसन्न। आँचल में सुख समेट हृदय ऊपर उठता हुआ। संतोष को साँस आई। कमला ने कहा: 'बहन ! भगवान देता है। अकेली छोड़ गये हैं मुझे ! पर वे नाम पायें। मुझे और क्या चाहिये ! मुन्नू पूछता था। क्या कहती !'

कमला मन खोलती रही। शीला उस समीप्य में आत्मीयता का गौरव पाती रही। जो बड़ा हो रहा है, उसकी मित्रता का मोल भी अधिक है। घूरे में एक पत्थर जिसे अपना सा समझता था वह हीरा निकल गया, तो अब उसकी स्तुति ही कल्याणकर होगई।

'अब की बार आयें तो शीला बहन ! तुम कहना ! ऐसे बिना कहे चले जाते हैं। उनके सिवा हमारा कौन है ?'

विजय की अनुभूति में भी पराजय का भय और आशंका। 'पर वे भी तो दुखियों के लिये जान खपाते हैं। अपने लिये कब तक रोकूँ। कहती हूँ तो आँखें खोल कर ऐसे देखते हैं···सच खीझ उठती हूं। कहते नहीं, पर ऐसा लगता

है जैसे कहते हों···स्त्री बहुत छोटे मन की होती है····

'पर बहन गिरस्ती भी तो कुछ है ! जो घर न देखा तो समाज क्या देखा ? खैरात क्या घर से शुरू होगी ? ऐसा तो कोई नहीं ? इतने नेता हैं···घर के भरे पूरे हैं। घर न बसाते साधू रहते। स्त्री क्या करे ?'

शीला लौट चली। शशि का हाथ पकड़े थी। जीने से उतर कर छोटे दालान में से कहा: 'नीलू बाबू आये' तो खबर कर देना। तुम सबकी दावत है हमारे घर ! आओगी न ?'

आँचल मुँह में दबाकर हँसकर कमला ने कहा: 'नहीं।'

शीला भी हंसी। कहा: 'तो यहीं भेज दूंगी सीधा !'

फिर हास्य !

मुन्नू बैठ गया।

'खाले बेटा'

'और माँ तू !'

कमला चुप।

'दादी गुस्सा थी इसलिये ?'

'अरे चल हट ! ऐसा नहीं कहते।'

बालक हठीला।

'खाले बेटा।'

'तू भी खा माँ।'

दरवाजे की कुण्डी बजी।

एक मर्दानी आवाज़: माताजी ! माताजी !

कमला नहीं पहचान सकी।

मुन्नू 'मर्द' उठा। 'मैं देखता हूं।'

'तू ठहर ! खाना खाले । मैं देखलूंगी ।'

दरवाजा खोला तो एक अपरिचित ने हाथ जोड़ कर कहा: 'नमस्ते भाभी ! आप शायद मुझे नहीं जानती हों। नीलकान्त जी जानते हैं। मैं परमेश्वर हूं।'

कमला ने हाथ जोड़ दिये ।

वह बोला: 'जत्था अभी नहीं लौटा है। कल सब लौट आयेंगे। मैं भी भाई नीलकान्त के साथ उसी पत्र में काम करता हूँ। मैंने उनके जीवन पर लेख लिखा है। चाहता हूँ आज ही छप जाये। कुछ तो जानता था, कुछ और बातें पूछनी थीं। माताजी से पूछ लेता ! एक फोटो भी चाहिये।'

कमला ने सुना। कहा: 'बैठिये। माताजी आती ही होंगी। मंदिर गई हैं।'

झिझकता हुआ परमेश्वर बैठ गया। मुन्नू को संकोच, आशंका, माँ के नयनों के उल्लास में सांत्वना।

'कौन है माँ ?' धीरे से।

'अखबार वाले हैं।' उसने उसके मुलायम बालों पर हाथ फेरा। वह ऊपर चली गई। मुन्नू ने आले से फोटो उठाया और निस्संकोच परमेश्वर से कहा: फोटो यह रहा।

परमेश्वर जी खोलकर हँसा।

मुन्नू अवाक !

'अच्छा है !' पूछा।

परमेश्वर और हंसा। ऊपर से झाँककर कमला भी मुस्कराई। मुन्नू ने अपना फोटो पेश कर दिया था।

द्वार पर डंडा खड़का। परमेश्वर ने उठकर कहा: नमस्ते माता जी।

वृद्धा ने देखा शान्त नयन, तीक्ष्ण। अतृप्त जीवन की झलक बरौनियों में, कथाओं के सहने की आदत कठोर नाक में। पिचके गाल काल की टक्कर लेते किसी पुरानी समाधि के अवशेष। धोती बिना किनारी की, न बहुत उजली, न चटकदार! बैठ कर कहा : जीते रहो!

फिर बुढ़ापा ताकत के लिये फेफड़ों को खोलकर जिंदगी की हवा भरने लगा। साँस जुड़ी तो देखा—एक आदमी। परमेश्वर ने सब दुहराया। नीलू को माँ ने सुना। एक गौरव की अस्पष्ट छाया, पर यथार्थ की कटुता से तिक्त आदर्श भी धुंधले और छोटे होगये थे। व्यंग से कहा: 'उस सूद्र का क्या घर की इज्जत लुटादी उसने। ब्राह्मन होकर कुल को कालिख लगादी! भगवान दण्ड देगा देखना। अहंकार का फल तो बड़े बड़ों ने भोगा है बेटा। हम तो चीज ही क्या हैं? तुम कीचड़ उछलवाओ! वह उछाले। तुम किनारे, वह दल-दल के बीच! उसके बाप कैसे सनातनी थे। धर्म भ्रष्ट! मलेच्छ!'

कमला का मन टूक टूक होगया। पर परमेश्वर राज-नैतिक व्यक्ति। ज़माना कहे—रसगुल्लादास। बड़ा नेता कहे—गुर्गे के कान मलदो। फिर भी अपनी सत्ता का संघर्ष कि छुटभैया नेतृत्व! जमी धूल जहाँ की तहाँ, कच्ची धूल सिर चढ़ी, झाड़दो तो कोई बात नहीं, झोका फिर आयेगा। कहा: 'अहा! नीलकान्त को जन्म दिया, वही कोख है। धन्य है।

कंस वध करने वाले कृष्ण की माता देवकी हैं।'

वृद्धा का संस्कार पुलका। नयनों में स्नेह आया।

'सारे शहर में बच्चा बच्चा कह रहा है।' परमेश्वर कहता गया। और भी बहुत कुछ।

वृद्धा समर्पण कर गई। कहा: 'भैया! तुम जानो! अब धरम करम नहीं रहा, देश, समाज, और सरकार आगई नास्तिक!'

सूखी मुस्कान, फीका दर्द।

परमेश्वर मुस्कराया। रूढ़ि की चट्टान की एक दरार में अभी भी जिन्दगी की घास दिख रही थी।

उधर कमला विभोर। माँ पर क्रोध। अपने पेट के जने पर भी यह विक्षोभ! परन्तु स्त्री का हृदय विभाजित प्रेम सहने का आदी नहीं। वह होती है असहनशील। उसकी व्यापकता उसके सत्ताधिकार में है। यदि दूसरा उसके फूल को देवता पर चढ़ाये तो उसे अपने ही फूल की गंध आना बंद होजाती है।

परमेश्वर विजयी हुआ। 'आपके पुत्र ने नगर का नाम उठाया है, सदियों बाद यहाँ दूसरों का दर्द जानने वाला पैदा हुआ है। क्या थे गाँधीजी। वे भी आदमी ही हैं। बढ़ते बढ़ते महात्मा होगये। साधना से क्या नहीं होता। त्रिलोक जीतने वाले भी पहले तप करके अपने को गलाते थे माताजी।'

वृद्धा के अतीत, वर्तमान और भविष्य के अंधकार में एक किरण, अज्ञात आलोक की किरण आई, पर अंधेरे के आदी संस्कार उससे डरते थे।

'माताजी फोटो !'

'कमला !'

'जी माताजी !' ऊपर से कहा।

'फोटो है कोई ?'

'मुन्नू ! लेजा !'

परमेश्वर ने कहा: 'सरदार जल्दी करो। फिर तुम्हारा भी छपेगा हाँ ! सोलह बरस बाद !'

मुन्नू काल का मोल नहीं जानता। दौड़कर फोटो ला दिया।

परमेश्वर ने कहा: 'माताजी मैं चलूँ !'

वह अनजाना आदमी कमला को पुराना परिचित सा लगने लगा। पति का मित्र भी पति का आधा स्नेह पाता है, ऐसा कालिदास ने या किसी और ने शायद कहा भी है।

कमला ने पूछना चाहा: 'कब आयेंगे वे ?'

फिर याद आया…कल।

तभी परमेश्वर ने जीने में अटकी सी कमला की ओर मुड़कर कहा: 'नमस्ते भाभी !'

'नमस्ते !' इसकी तो पीठ थी इधर। पता नहीं कैसे जान गया वह यहीं खड़ी थी।

परमेश्वर चला गया। मुन्नू दरवाजे पर खड़ा देखता रहा। कमला ने उसे पीछे करके द्वार बंद करके कहा: 'चल ! माताजी को खाना खिलायेंगे…

वृद्धा ने देखा और कहा: 'बच्चे ने खालिया ?'

'हाँ माताजी !'

वृद्धा उठी। हाथ मुँह धोये फिर कहा: 'कल आजायेगा न नीलू।'

मुन्नू ने बढ़कर कहा: 'हाँ वह कह गया है···

'कह गया हैं नहीं,' कमला ने डाँटा—'कह गये हैं ?'

मुन्नू सक पका गया। वृद्धा ने कहा: 'अरी रहने दे। अपने आप सीखा जायेगा···



बिना पाँव की धरती

आकाश पर काली छाया झूमने लगी यानी साँझ होगई। कमला ने लालटैन जलादी। उदासी ने सिर्फ करवट बदली। नीलू की माँ ने अपने फिर से बसाये हुए मन्दिर में अगरबत्ती जलादी, जिससे वह विक्षुब्ध वातावरण भी कोंपल सा काँप उठा। मुन्नू ने मार खाई थी, रोया था, और आँसू आने पर वह जीत गया था।

'दादी ! आज हरे रामा नहीं करोगी ?'

कमला ने राह की ओर उत्सुक आँखों से देखते हुए वह कीर्त्तन सुना। बाहर भी हलचल नहीं थी। दूर दूर चुङ्गी की बिजलियाँ लट्ठों पर चमक रहीं थीं। कभी कभी राह चलते दिख जाते। वह बर्त्तन माँजने में लग गई। आज जी बड़ा हलकान था। एक अजीब सी गुदगुदी दिल में होरही थी। पीपल के सारे पत्ते फर चुके थे, फिर तीती निकल आईं, बत्तियों सी फागुन चैत की। अगर अब वे हथेलियाँ खोल दें तो गभिन हरियाली छा जाये। सुख भी बड़े नखरे से आता है, आता कम है, रिझाता ज्यादा है।

फिर ताँगों की खड़खड़। घोड़ों की टपाटप टपाटप। कमला ने खिड़की से झाँका। पर ताँगे निकल गये। रुके नहीं। कमला की आँखें पीछा करती रहीं ताँगों का, फिर

अंधेरे का, फिर शून्य का, फिर बाहर दिखना बंद होगया। मन के भीतर कुछ दिखने लगा, एक चेहरा एक मुस्कान, एक यश···

रिक्शों ने ध्यान तोड़ा। आदमी चलाते थे, गाड़ी चलती थी। फिर छागया सन्नाटा।

शाम को वे आयेंगे शायद! आकाश को देखकर सौन लिया, पर कमबख्त उतना भी न उड़ा जितना कौआ उड़ता है। पर रात तीन बजे भी तो एक गाड़ी आती है। रात को रुक गये तो सबेरे बस से आयेंगे। जी का बहलाव और समुद्र की लहरों का खेल एक सा ही होता है। चिन्ता तो पक्षी है अनन्त शून्य में पंख खोलकर उड़ती दीखती है, पर अनाम के क्षितिज के आगे उसका धुंधला सा चिह्न भी नहीं दीखता।

'बहू!' बृद्धा ने पुकारा।

'माताजी!'

कीर्त्तन समाप्त हो चुका था।

'पञ्चामिरत तैयार है?'

'लाऊँ?'

तश्तरी में आलू का हलुआ और पत्थर की कुण्डी में पञ्चायत लाकर धर लिया। दादी और नाती ने खाया।

'तू फिर खारहा है' कमला ने कहा: 'अभी तो रोटी खाई है।'

वृद्धा ने उपवास तोड़ते हुए कहा: 'खाने दे बहू। यही तो उमर है, सब देह को लगता है।'

'वे अभी तक नहीं आये माताजी!'

'आजायेगा ।'

'मथुरा वाली गाड़ी का तो टैम होगया ।'

'अरी तो क्यों घबराती है । वहाँ से ऐसी क्या कमाई करके आरहा है ? सबेरे आयेगा वो तो ! आजाद आदमी ठहरा ! घर की उसे फिकर ही क्या है । परमेसुर कहता तो था ।'

कमला के काँटा गड़ा । शायद वह न होती तो माँ की ममता और ही होती । वृद्धा की आयु ने सिखाया था कि स्नेह छल है । जिस पर उसे केन्द्रित किया जाता है, वही धोखा देता है ।

वह उदास होगई ।

'बहू ! छत पर बिस्तर बिछा दिया है न ?'

'जी हाँ ।'

मुन्नू सोगया था । काम समाप्त करके जब कमला ऊपर पहुँची वृद्धा माला फेर रही थी । आँखें बन्द थीं । कमला उसे देखती बैठी रही । यौवन कभी नहीं सोचने देता कि बुढ़ापा आगे आकर इसी माटी को कैसा पशुत्व देगा, उसे अपने देवत्व का जो गर्व होता है । निर्माण ने कभी ध्वंस के गतिरोध को भीतर से स्वीकार नहीं किया ।

'बहू थोड़ा पानी तो पिलादे !'

वृद्धा पानी पीकर लेट गई ।

कमला ने कहा: 'माताजी ! अब तो मुन्नू को स्कूल भेजना चाहिये । पाँचवीं पूरी हो चली । कुछ पढ़ेगा तो ढंग भी

सीखेगा। चित्त भी बँटेगा। पंडित जी को बुलाकर पट्टी पुजवा दीजिये ! वे भी कल आजायेंगे।'

वृद्धा ने अंधकार में देखते हुए कहा: 'पट्टी पुज जायेगी बहू, पहले देवी की सवामनी तो होले जो मैंने इसकी माता में बोलदी थी ! नीलू से मैं तो कह दूँगी कि देवी देवता की बात में यह सब नहीं चलेगा। वह न माने, मानवता कब है, भोगेगा, मैं तो रहूँगी नहीं....'

अज्ञात के भय ने नारी को झकझोरा। ममता और भय ही साथ साथ चलते हैं। कमला ने कहा: 'आप समझायें माता जी उन्हें। मेरी तो मानते नहीं। देवी देवता से कौन बचा है ?'

'अखबार का काम ठहरा। कभी फुर्सत मिलेगी उसे ! अरे कहीं इकट्ठी ही न मिल जाये !'

कमला ने सास का दर्द समझा। पति पर क्रोध भी आया। क्यों करते हैं वे मनमानी। दुनिया में रहना है तो उसी की रीत से। हम कौन जो नक्कू बनें।

वृद्धा ऊंघी, फिर सो गई।

कमला का रोम रोम थर्रा उठा।

'अच्छा है तो अपना, बुरा है तो अपना। इसके पिता इन कामों में आगे रहते थे। गली वाले अभी तक याद करते हैं।'

कमला खाट पर जा लेटी।

नगर सो गया था। साढ़े ग्यारह का अकेला घंटा बजा। अंधेरे में कसमसाहट हुई जैसे सुदूर की आकांक्षा विराट दुःख में लरजी हो। शाम से छितराये बादल अब घना गए थे। मुझ

ठिनठिनाया। उसने पानी पिला कर उसे सुला दिया, जैसे वह उठा न था।

नींद नहीं आ रही थी। उठी। सड़क देखती रही। १२ बज गए। एक, दो तीन···

आने में तीन घंटे और हैं···

लेटी, तो जागती के भ्रम में सो गई···

पौ का दामन फट रहा था। कुण्डी खड़क उठी। कमला भाग कर उतरी।

कुण्डी तीसरी बार खड़की। उनींदी आँखों की तहों में लाली उमंगों भरी कमला ने द्वार खोला, पर वह न था, जिसकी आशा थी। आँखों में वह उतरा नहीं, माथे पर आँचल सरक आया। नन्दराम था, मुहल्ले का प्रेस कम्पोजीटर।

'मैं समझी थी···' बात वहीं रोक दी। कमला ने फिर कहा : नमस्ते।

नन्दराम ने मुस्करा कर कहा : सुबह तीन की गाड़ी से जत्था आ गया है भाभी! भैया और सुरेशजी रुक गए हैं। परमेश्वर जी भी गए है। वहाँ सेवादल की जरूरी बैठक हो रही है। आज दुपहर तक आजायेंगे वे सब।

'कौन है' वृद्धा ने पूछा।

'मैं हूं अम्मा! नन्दो!'

'अच्छा बेटा! भीतर आ जा न?'

'आया अम्मा।'

'अरे उसे आने दोगे या नहीं?'

नन्दराम हँसा। कहा: 'मैं तो यह कहने आया हूँ कि आज दोपहर को सेठ राधारमण जी ने कांग्रेस कमेटी के दफ़्तर में सब साथियों को सपरिवार दावत दी है। आप सब आइए। भैया सीधे वहीं पहुंचेगे। फिर शाम को चार बजे सभा होगी, पब्लिक आयेगी। उसमें सत्याग्रहियों का स्वागत होगा।'

कमला ने सुना। तृप्ति उमँगने लगी।

उसने कहा: तो दोपहर तक....

'आजायेंगे। कहता हूँ न ?'

'राधारमण !' वृद्धा ने कहा। याद आया, बड़ा नेता था। जेल भी गया था। आढ़त की दूकान थी। कहते थे माल धरता था और कहे पर कभी बेची नहीं दिखाता था, महँगे बेच सस्ते में दिखाकर बीच का माल साफ़ खा जाता था। पर उससे क्या ? था तो बड़ा आदमी। रियासत में और ऐसा कौन था जो !

नन्दराम चला गया। पर अन्तिम वाक्य छोड़ गया—तैयार रहिएगा। चलना है।

भारी पाँवों से चलकर कमला ऊपर गई।

मुन्नू ने अपने छोटे छोटे हाथों से मुँह धोया।

पर सहसा ही वृद्धा बड़बड़ा उठी: मैं नहीं जाऊंगी बहू, सुनती है, ऐसे चमारों के यहाँ मैं खाने नहीं जाऊंगी। तुझे जाना हो चली जाना। नीलू तो आ ही जायेगा !

कमला कुछ न कह सकी। बिस्तरे उठाए, काम में लग गई। आज काम भी न रहा। खाना तो बनाना ही नहीं था,

माताजी को कुछ खिचड़ी रांधनी थी । पूरा मकान झाड़ा, मैले कपड़े धोए, बर्त्तन चमचम चमका दिए, फिर नीलकांत को प्रिय लगने वाला कार्य किया—चर्खा चलाया । नीलू गाँधीवादी था । और भारतीय स्त्री का कर्त्तव्य वह सब है जो पति को प्रिय लगे, वर्ना दो रुचियों की थाती जुड़ती भी तो नहीं !

दोपहर हो गई । सूरज सिर पर चढ़ आया । चर्खा कातते पसीना चुचा आया । मुन्नू पास बैठा गुड़िया सजा रहा था । वह न जाने क्या क्या बोलता जा रहा था । कमला सुन रही थी, या नहीं सुन रही थी । ध्यान द्वार पर लगा था । आते ही होंगे अब ! दस दिन हो गए उन्हें । बालक को इसकी चिंता नहीं कि उत्तर मिलता है या नहीं । खेल का बहलाव क्या कम कशिश रखता है ?

बाहर मोटर का भोंपू बोला । दोनों अपनी अपनी तन्मयता में नहीं सुन सके, पर जब भोंपू फिर बजा तो कमला चौंक उठी ।

चर्खा रुक गया ।

कौन होगा !

क्या वे ही···

मोटर में···

क्यों नहीं ?···

नेता !

कमला का वैभव फूट पड़ा मन के आवेग में···

मुन्नू ने पुकारा : 'माँ मोटर'···

'चुप चुप धीरे रे धीरे···

पर इतनी बड़ी घटना, मुन्नू कुछ आवेश में था।

'माँ ! मोटर...हमारे दरवाजे पर...

अंदर आँगन में किसी ने पुकारा-मातजी ! माताजी !

मोटे अक्षरों की रामायण पर से वृद्धा ने आँखें उठाईं और भर्राई आवाज़ में कहा: 'कौन है ?'

संभवतः मोटर का अस्तित्व उसके उपचेतन तक पहुँच चुका था।

नन्दराम और बद्रीप्रसाद को देखा, दोनों ने हाथ जोड़कर कहा : माताजी !

और झुक कर चरण छुए।

वृद्धा का मन भीतर ही भीतर गल गया। पर युगों की तपिश झेले थी। ऊपरी मुस्कान से कहा : क्या है रे नन्दो !

नन्दराम ने मुस्काकर कहा : 'अम्मा ! सुबह कह गया था न मैं ! अब चलो। बाहर गाड़ी खड़ी है।'

नन्दराम वृद्धा का पुराना परिचित, आधे अपमान को न सुनना, बाकी आधे को हँस कर टाल जाना, उसका स्वभाव हो चुका था।

कमला के गले में उत्सुकता का थूक अटकने लगा। शीला ने भी सुना होगा अपने घर से। शशि ने मोटर देखी होगी। कहा होगा भीतर। मुहल्ला देख रहा होगा।

पर वृद्धा ने मजा किरकिरा कर दिया। बोली : 'मैं दावत बावत में नही जाऊँगी। न जाने तुमने कौन भंगी

चमार वहाँ घुसा रखे होंगे । तुम लोगों के साथ मैं अपना धरम क्यों बिगाड़ूँ ? तुम तो पढ़ गए हो न ? मैंने तो बहू से यहीं थोड़ी खिचड़ी बनवा ली है ।'

नन्दराम बालक की तरह हँसा । बोला : 'अम्मा ! यहाँ वह बात नहीं । हम तो जानते थे कि भंगी चमार देखकर कोई न आयेगा यहाँ । सभा की बात और है, खाने की और है । क्या करें । जमाना जो ठहरा !'

बद्री भी हँसा । बोला : "अम्मा कांगरेस की ही जीत होगी । ईमान की बात है । पर हम क्या चूल्हे तोड़ते हैं ? आप चलिये तो । वहाँ बामनों ने खाना बनाया है, सब पक्का है, कच्चा नहीं । भंगी चमार तो फिर बड़ी सभा में आयेंगे और उसमें तो बस हम मर्द लोग जायेंगे, औरतें नहीं ।"

'उनके लिये अलग इन्तजाम है,' नन्दराम ने कहा—'आपको बिल्कुल, बिल्कुल अलग बिठाऊँगा । मेरे होते हुए इतनी फिकर क्यों कर रही हो अम्मा !'

'फिर भी मुझे तो रहने दो बेटा !'

'नहीं अम्मा ? चलना तो तुम्हें पड़ेगा ही ।'

नीलू की माँ मुस्कराई । पूछा : 'आ गया होगा वह बेईमान ! उसी ने भेजा होगा तुम्हें ।'

'हम क्या उससे कम बेईमान हैं अम्मा !' नन्दराम ने हठीले की तरह कहा ।

'वे अभी नहीं आये ।' बद्री ने जोड़ा । 'पर अब आ गये होंगे ।'

'अभी नहीं आये ?' कमला चौंक उठी ।

'लो हमें दफ़्तर से निकले हो गये दो घंटे।' नन्दराम ने कहा—'अब शायद आ ही गये होंगे।'

फिर उसने मचलकर वृद्धा के पाँव छू लिये और कहा : उठो अम्मा ! तुम्हें कसम है। सभा सूनी रह जायेगी। नीलू की माँ न जायेगी तो लोगों की आँखें न खुलेंगी। नीलू का पुन्न भी अधूरा रह जायेगा। रियासत में वैसे ही लोग डरपोक और पिछड़े हुए हैं। कहेंगे, अरे नीलू के घर के ही नहीं तो फिर और कौन जाये। नीलू का ही परताप है माँ ! कि रियासत भी गवरमेंट से होड़ ले रही है सुराज आन्दोलन में। मैं कहता हूं आगे चलकर नीलू का नाम भी बहुत बड़े नेत ओं में गिना जायेगा माँ। नीलू फले फूले इससे बढ़कर भी तुम्हारा क्या धरम है अम्मा !

'अरे लोग तो इन्तजार कर रहे होंगे !' बद्री ने याद दिलाया।

नीलू का भविष्य ! पुत्र का स्नेह ! वृद्धा ने फीकी आँखों से देखकर कहा : 'ले बहू ! नहीं मानेंगे ये लोग। चलो कपड़े पहन लो तुम लोग ! मुन्नू को भी पहनादे। धूप काफी है। टोपी पहना दीजो।'

'टोपी तो मेरी खद्दर की है,' मुन्नू ने कहा।

'अरे वह पहनेगा ?' वृद्धा ने कहा : 'वह गोटे वाली···

'नही दादी, मुझे सरम लगती है···

नन्दराम और बद्री दोनों हँस पड़े। कमला भी।

'क्यों माँ तुम भी तो खद्दर की धोती पहनके चलोगी न ?

खाट पर तुमने निकाल रखी है…

'अरे हट !' कमला ने डाँटा, स्नेह से ही। उसकी उत्सुकता प्रकट हो गई।

नन्दराम की आँखें कुछ छोटी हो गईं।

मोटर चल पड़ी। कितना गर्व था। सामने के दूधवाले ने देखा और फिर परचूनिये की आँखों की तिल्ली पर अपनी मुस्कान का उस्तरा पैना किया। खबर फैल गई। पर नीलू का यश भी तो था।

मोटर जब कमेटी के दफ़्तर के सामने जा पहुँची तब कई कांग्रेस के कार्यकर्त्ता और विद्यार्थी दरवाजे पर ही खड़े मिले।

नन्दराम ने मोटर का दरवाज़ा खोला और वे लोग उतरे। कमला, सफेद खद्दर की साड़ी में, सफेद कुर्ती पूरी बाहों की। माथे पर बिंदी, नाक में कील। रंग में गोरापन और एक मुलायमियत।

मौत से जिंदगी तब हारती है, जब रहती नहीं

प्रजा परिषद के दफ़्तर में काफी चहल पहल। कहीं तिरंगे झंडे लगे थे, कहीं करघे के बने रंग बिरंगे पर्दे लटके थे। सफेद खादी के धुले वस्त्र पहने लोग इधर उधर घूम रहे थे। स्त्रियाँ भीतर हाल में बैठ गईं थीं। कमला घुसी तो आँखें चमत्कृत होगईं। और फिर थी एक बेचैनी। जैसे जो हो रहा था उस सबमें कहीं एक रिक्ति शेष थी। परिचित स्त्रियों ने नमस्ते की, और कमला उनसे बोलती मुन्नू के साथ बैठ गई। नीलू की माँ को एक मुहल्ले की वृद्धा मिल गई।

स्त्रियों में फुसपुस फुसपुस होने लगी। उन्होंने कमला से इतने सवाल किये कि वह घबरा गई। और वे सब नीलकांत के बारे में थे। कमला नहीं जानती थी कि वे कब आयेंगे अपरिचिताओं के सामने वह अपना अज्ञान भी प्रगट नहीं कर सकती थी। उसके मन में एक बिचित्र प्रकार की कचोट उठी, जैसे नीलकांत बहुत ऊँचा है, वह उसके सामने छोटी थी बहुत छोटी। और तब उसे नीलकांत की मुस्कराहट याद हो आई। वह मुस्कान नहीं थी शायद। दया की भीख थी जो स्नेह उसे निरंतर दिलाया करता था। वह होड़ बदकर अपने पति से कंधे से कंधा भिड़ाकर खड़ी होती थी, किन्तु क्या सचमुच उसकी ऊँचाई पर पहुँचती थी!

उसने पास बैठी मालती से कहा : मालती बहन ! पूछ तो तेरे भाई सा'ब आये या नहीं ?

स्त्रियों में कौतूहल फैल गया ?

क्या अभी तक नहीं आये ?

क्या कमला तक नहीं जानती ?

कमला को लगा गले में थूक अटक गया था ।

उसने कहा : मथुरा में कोई मीटिंग होने वाली थी, उसी में रुक गये हैं ।

मालती उठकर बाहर चली गई । कमला ने स्त्रियों को देखा । कोई भी चिंतित सी नहीं लगती थी । दावत के सामानों की खुशबू कभी कभी हवा इधर फेंक जाती थी । भूखे पेटों में उसे सूंघकर एक तृप्ति सी भर भर आती थी ।

कमला को उनके सुख से ईर्ष्या हुई । यह सब भीतर हैं, फिर भी बाहर हैं । किसी का घर दाँव पर नहीं लगा है । हम ही नक्कू बने हैं । उसने सिर झुका लिया । स्त्रियों की आवाज़ अब कतरनी की कचकच सी फैलने लगी थी ।

मालती ने लौटकर कहा : भाभी ! मैंने चाचा राधारमण जी से पूछा था । उन्होंने कहा कि सब भाई सा'ब की ही बाट देख रहे हैं ।

संतोष आया, मन में उतरा । उसे एक गौरव हुआ । इतने लोग उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं । उदासी हट गई । गर्व से सिर उठाकर देखा । मुन्नू बच्चों में खेल रहा था ।

एक बज गया । उसी समय एक ताँगा दौड़ता हुआ आया और द्वार पर रुका । सुरेशजी ताँगे से उतरे । लोगों के मुख

पर हर्ष, उत्सुकता और आशंका की रेखाएँ खिचीं। सुरेशजी गंभीर थे। नेता गंभीर रहते हैं, विनम्र रहते हैं, तभी उनका प्रभाव पड़ता है।

सेठ राधारमण ने बढ़कर कहा : खूब आये बड़ा इंतजार कराया।

सेठजी ने नेता को गले लगाया मानो कोई मैडिल अपने सफेद कुर्ते पर टाँग लिया।

तब देखा तांगे से उतरा परमेश्वर। कुछ थका सा, कुछ उदास सा, फीकी हँसी हँसता।

सामान तांगे से उतार लिया गया।

राधारमणजी ने कुछ घबराकर पूछा : और नीलकांतजी कहाँ है ?

परमेश्वर चुप रहा। सुरेशजी ने पूछा : यहाँ क्या कोई उत्सव हो रहा है ?

राधारमण ने व्यग्रता से कहा : अरे भाई नया उदाहरण सामने आया है। देश में एक नया दीपक जला है। मैंने उसी लिये आज सत्याग्रहियों को दावत दी है। आप लोगों की राह देखते तो इतनी देर हो गई। सभी औरतें और बच्चे तक भूखे बैठे हैं। नीलकान्त जी की माताजी, पत्नी और बालक भी भीतर आये हैं।

सुरेश का मुँह कठोर हो आया। फिर सहसा वही पुरानी नम्रता मुस्कराने लगी।

परमेश्वर की ओर आँखें मुड़ीं। परमेश्वर गर्दन खुजाने लगा।

'वे कब आयेंगे ?' किसी ने पूछा ।

'रुक गये हैं ।' सुरेशजी ने कहा : 'मौलाना बरकतअली मेवात से आये थे वहीं । उनसे मिलना ज़रूरी था । मेवों पर मुस्लिम लीग का असर बढ़ रहा है, क्योंकि वे महाराज के खिलाफ़ हो रहे हैं । कोशिश करने से शायद वे कांग्रेस में आ-जायें । प्रजा परिषद का बल काफ़ी बढ़ सकेगा । उन्हीं ने नीलकान्तजी को रोक लिया । नीलकांतजी ने बड़े दुख के साथ क्षमा याचना की है कि वे इस समय उपस्थित नहीं हो सके, क्योंकि एक आवश्यक कार्य सामने आगया था ।

यह उत्तर सुनकर एकदम सब बातें करनें लग गये और बालन्टियर खाने का इंतज़ाम करने को झपट पड़े । कमला सुनती रही । क्या अब उसके पति का महत्व इतना बढ़ गया था ! अब समझौते की बातें अखबारों में छपेगी । कोई बात नहीं अगर रुक गये । उनको इतना काम है फुर्सत ही कहाँ मिलेगी । तो उसके अपने जीवन में ही क्या आनन्द रह जायेगा ।

समाज की व्याप्ति में परिवार को रिक्ति मिलेगी तो व्यक्ति की तृप्ति का वह छोटा क्षण क्या नष्ट न हो जायगा, जिसमें जीवन का शाश्वत संबल प्रेम है !

सब लोग खाने बैठ गये । कुल्लड़ों में केवड़े का जल महकने लगा ।

सुरेशजी और परमेश्वर ने सेठ राधारमण की ओर देखा । सुरेशजी आगे चले, बाकी दोनों बिना बोले उनके पीछे चलकर ऊपर के कमरे में पहुँच गये ।

परमेश्वर ने द्वार भीतर से बंद कर लिया।

राधारमण जी को कौतूहल ने घेर लिया था।

बोले : क्या बात है ?

परमेश्वर की आँखें भीग गईं।

सुरेशजी ने लम्बी साँस ली।

राधारमणजी चौंके।

'क्यों ? क्या बात हुई सुरेश जी ?'

'वह हुआ जिसकी आशा नहीं थी।'

'यानी।'

'नीलकांत जी हम लोगों के बीच नहीं रहे।' शब्द गले में अटक गये।

राधारमण ने घबराये स्वर से कहा: हैं ! क्या कहा ? आप तो कहते थे बरकत...

'धीरे बोलिये।' सुरेशजी ने पनीली आँखों से देखते हुए कहा: 'अभी हाहाकार मच जाता ! सारी दावत धरी रह जाती।'

पर सुरेशजी का मुँह स्याह पड़ गया कि वे लोगों को सांत्वना नहीं बंधा रहे हैं। जब कमला को पता चलेगा, जब माँ को पता चलेगा कि वे अपने नीलकांत के मरने पर दावत उड़ा रही थीं, तब उनका हृदय इस ग्लानि से न फट जायेगा ! क्या यह खबर छिपा कर उन्होंने ठीक किया था। किन्तु राजनीति और भी कठोर हैं। व्यक्ति का विनाश हुआ, परंतु समाज को आलोक मिला। क्या उस बलिदान के शोक में विजय का आनन्द भी डुबा दिया जाये ? उन्होंने फिर कहा:

जो ईश्वर चाहता है, वह होकर रहता है, अकेले में नीलकांत-जी के परिवार को खबर देना ज्यादा अच्छा होगा।

परमेश्वर सुबक रहा था।

सुरेशजी ने उसकी पीठ पर हाथ रख कर कहा: धीरज धरो। यह युद्ध है, अहिंसात्मक युद्ध। इसमें विश्वास ही शक्ति है। आज तक संसार को किसी सेना ने ऐसा युद्ध नहीं किया। आपस का डर ही हमारी निर्बलता है। गाँधीजी ने कहा है, मृत्यु पराजय नहीं है। महान् की साधना में हुई मृत्यु विश्व शांति के विशाल दुर्ग पर एक और सत्य की सफेद पताका का फ़हर जाना है। हिम्मत रखो। अंगरेजी सरकार का दमन आज तक करोड़ों को नहीं दबा सका है। रियासतों का आन्दोलन छोटा है, वह इन्हीं बलिदानों के बल पर बढ़ेगा।

सुरेश शर्मा के ये वचन सुनकर परमेश्वर की वेदना ने सिर झुका दिया। उसे लगा वह कुछ पवित्र होगया था, उसे लगा यह सारा आन्दोलन केवल राजनैतिक नहीं था। मनुष्य की चेतना का भी संघर्ष था। (उसने कल्पना की कि जब भारत स्वतन्त्र होगा, तब के मनुष्य की नैतिकता न जाने कितने ऊँचे स्तर की होगी! उसमें न शोषण रहेगा, न दमन!)

राधारमण का चेहरा सूख गया था। बोला: कैसा अनर्थ हो रहा है भगवान! और उस तरफ लाटसाहब शिकार खेलने आने वाले हैं। हाँके के लिए चमार बेगार में पकड़े जारहे हैं। इधर लोग नीचे खुशी में दावत खारहे हैं, और

ऊपर हम ! उफ ! कितना भयानक है यह सब ! तुमने परमेश्वर ! पहले खबर क्यों न दी ! इस वक्त हम शहीद के लोहू में झंडा भिगोकर जुलूस निकालते !

परमेश्वर ने अपने स्वर को संतुलित कर लिया था। बोला: कल रात को ही नीलकांतजी न जाने कहाँ खोगये थे। सुबह सत्याग्रह सफल हो चुका था। रियासत का नेता मथुरा में जाकर नेता बन गया, इससे वहाँ के नेता मन ही मन जल रहे थे, काफी विरोध था ही। पण्डों ने भारी धमकियाँ दी थीं। पर नीलकांत जी अटल रहे। सात आठ दिन की खींच-तान के बाद आखिर हरिजन मन्दिरों में घुस ही गये। थोड़ी बहुत मारपीट भी हुई पर कोई खास चोट हमारे आदमियों को नहीं लगी थी। सभी लोग ज़िला कमेटी के दफ़्तर में ठहरे हुए थे। सोचा था सत्याग्रह शाम को खतम होने पर चलेंगे। भाई नीलकांत यह कहकर बाज़ार गये कि परसों मुन्नू की सालगिरह है मैं उसके लिये कुछ खिलौने ले आऊँ। और शाम की साढ़े छः की गाड़ी से चलना तय हो गया। हमने सामान बांधा। छः बजे तक वे नहीं लौटे। सवा छह बजे तो हमने सोचा शायद वे सीधे स्टेशन चले गये होंगे। हम सब भी स्टेशन पहुँच गये। गाड़ी आई और चली भी गई लेकिन उनका कोई पता नहीं चला। शायद किसी ज़रूरी काम से न रुक गये हों, हमने सोचा। सबको उस गाड़ी पर रवाना कर दिया। मैं और सुरेशजी स्टेशन पर ही रुके रहे। मैं इनके साथ शहर गया। जगह-जगह ढूँढा। कमेटी का दफ़्तर देखा। यों ११ बज गये। आधी रात हो गई, उनका कहीं पता न चला।

मथुरा ज़रा सी तो जगह ही है। तब हमें एक अशुभ शंका ने घेरना शुरू किया। हम को लगा कोई ख़तरे की बात ज़रूर थी। पर वह क्या था, हम कह नहीं रहे थे। शायद वे स्टेशन पहुँचे हों। तीन की गाड़ी भी तो जाती है। वहाँ पहुंचे तो भी कोई नहीं मिला। वे कहीं नहीं थे। तब, परमेश्वर ने काँपती आवाज़ से कहा—'हम थाने गये और रात के साढ़े बारह बजे हमने रिपोर्ट दर्ज कराई। सिपाही दौड़ गये। हमने पता दिया और दफ़्तर लौट आये। पुलिसवालों ने कहा: ख़बर मिलते ही आपको बुलवा लेंगे। दफ़्तर में बातें करते हुए ही रात बीत जाती। पर सुरेशजी ने कहा: हम दो रह गये हैं। बाकी सब लोग लौट गये हैं! किसी को शक तो अभी न होगा। वर्ना नीलकांतजी के घर के लोग बहुत घबरा जायेंगे। रात आँखों में कट गई। पाँच बजे थे जब सुरेशजी तखत पर सोये थे और मैं आराम कुर्सी पर पाँव फैलाये लेटा था। दो सिपाही आये। हमें जगाया और कहा: थाने चलिये ऐस० ओ० सा'ब बुलाते हैं। हमने पूछा: क्या बात है? कुछ ख़बर मिली। दोनों ने कहा: पता नहीं, हम बाहर ड्यूटी पर थे। बस इतना ही हुक्म मिला है। दरोगा जी ने हमें देखते ही कहा: बैठिये। हम बैठ गये। उन्होंने धीरे से कहा: आप नहीं जानते शायद कि दिल से मैं आपके साथ हूँ, यह और बात है कि मुझे ऊपर से सख़्ती करनी पड़ती है। क्योंकि बाल बच्चों का पेट पालना है और नौकरी अंजाम देती है। शहर में चारों तरफ़ देख लिया, कहीं कुछ पता नहीं चला।

जब हम नदी पार पहुंचे तब हमें एक कुटिया सी में रेती पर एक पागल सा साधू मिला। जैसे ही हम उसके पास पहुंचे वह हमें देखकर पुकारने लगा, डूब गया, डूब गया। जमादार गुमानसिंह ने पूछा: क्या डूब गया ! उसकी आवाज़ से साधू डर गया और उसने जो बताया उसका लुब्बेलुआब यह है कि झुटपटे के वक्त कुछ लोग एक आदमी को हाथ पाँव बाँधकर वहाँ लाये थे। उसके मुँह में कपड़ा ठुँसा हुआ था जिसकी वजह से वह घुरघुर की आवाज़ ज़रूर कर रहा था। उन सबके पास कांधे तक ऊँची लाठियाँ थीं। वह आदमी बहुत छटपटाता रहा मगर उन्होंने विश्रांतघाट के पीछे के बहुत बड़े बरगद की छाया में अंधेरे में उसे पानी में दबाकर मार डाला। उस वक्त वहाँ सन्नाटा था। साधु एक तो नदी के पार था, फिर झुटपुटे में ज़्यादा देख भी नहीं सका। फिर डर के मारे वह खुद बद-हवास होकर एक झाड़ी के पीछे छिप रहा था। वह किसी को नहीं पहचानता, हम उससे पूछ चुके हैं। हमारे कहने से साधू बुलाया गया, मगर वह कुछ भी नहीं बता पाया। दरोगा जी ने कहा: वाक़ा जो है सो पूरा शक होता है। मैं लाश बरा-मद कराने की कोशिश करता हूँ। और गुण्डों को भी छोड़ूंगा नहीं। उस वक्त दोनों की आँखों के आगे अंधेरा छा गया। और…

परमेश्वर की बात पूरी नहीं हो सकी। नीचे से आवाज़ सुनाई दी : राधारमण जी। राधारमण जी !

'अरे…' राधारमण ने चौंककर कहा : 'शायद वे लोग खाना खा चुके।'

आवाज़ आई : परमेश्वर जी।

परमेश्वर ने सुरेशजी की तरफ़ देखा वे बिल्कुल शान्त थे। बोले ! अभी किसी से कुछ न कहना। यह निश्चित नहीं है कि नीलकांत ही मारे गये हैं। इंसान की ज़िन्दगी में तरह-तरह के फेर आते हैं। आप जानते हैं राजनीति से हठात् एक दिन सुभाषचन्द्र बोस हिमालय चले गये थे, अरविंद योग करने चले गये थे ? इसलिये इसके बारे में चुप रहना अभी ज्यादा अच्छा है।

परमेश्वर और राधारमण नीचे आ गये। कई लोग जा चुके थे। ख़ास-ख़ास कार्य्यकर्त्ता रह गये थे।

नंदराम ने पास आकर कहा : आप ज़रा भीतर के कमरे में जाइये परमेश्वर जी। कमला जी आपकी राह देख रही हैं।

परमेश्वर का मन भीतर ही भीतर काँप उठा।

जाकर देखा। कमला, सास और बालक के साथ खड़ी थी। कितनी उत्सुकता थी उन मुखों पर, कितना गौरव था। परमेश्वर का मन किया कहदे, पर वह इतना बड़ा अन्याय था कि उसका गला रुंध गया। उसने एक बार प्रयत्न किया और बड़ी ही बनावटी मुस्कान उसके होठों पर फैल गई।

अख़बार सामने था। नीलकात का फोटो, फोटो में उसकी वही मुस्कान ! वही टोपी, वही ऊँचे गले की जाकेट। महिमान्विता सी खड़ी थी उसकी पत्नी। आतुर था बालक।

जिज्ञासु थी माता। एक परिवार। अब यह तीन पीढ़ियाँ अनाथ रह गई थीं। वे अपने प्रिय की मृत्यु पर दावत खाकर उठी हैं। परमेश्वर ऐसा हो गया जैसे देखता हुआ भी वह

कुछ देख नहीं रहा था।

नंदराम ने कहा : उफ़ ! कितना मुश्किल से इन दोनों ने खाना खाया है। माताजी को भरोसा ही न था, जाने किसने बनाया है। कमला जी कहती थीं, वे तो आये ही नहीं तब मैंने कहा : वे शाम तक ज़रूर आजायेंगे, आप क्यों जलसे की शान में धब्बा लगा रही हैं। आखिर यह दावत उन्हीं की तो शान है। क्या उनकी शान आपकी शान नहीं है।

परमेश्वर के रोंगटे खड़े हो गये। बलिदान की विभीषिका ने उसे हिला दिया। गोया यह यश इतना क्रूर था, कि इस निर्मम ने मानवीय मूल्यों को छीनकर उनसे भी आनन्द मनवाया था, जिनका जीवन अब सदा के लिये अन्धकारमय हो गया था !

'परमेश्वर भाई।' कमला ने कहा : आप उन्हें साथ तो नहीं लाये। देश का काम था, ठीक है। पर आज आजायेंगे न ?

'हाँ बहन !' परमेश्वर ने धीरे से कहा : देश का काम बड़ा कठिन होता है ! वह देर तक रोक लेता है ! यह तो युद्ध है। इसमें ममता का स्थान कहाँ हैं ? माताजी ! आपको कष्ट तो नहीं हुआ ?'

'नहीं बेटा मुझे क्या कष्ट होता। मेरी कोख धन्य हुई कि मेरा बेटा देश के काम में अपने को खो बैठा है।'

उस परिवर्तन से कमला को भी आश्चर्य हुआ।

'अच्छा अब चलें। नमस्ते।'

नमस्ते बहन।

राधारमण की गाड़ी फिर सबको लेकर चली गई। दस मिनट बाद सुरेशजी ने आकर देखा, परमेश्वर पत्थर की तरह खड़ा था। वे अत्यन्त करुणा से मुस्कराये और पास आकर उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा : परमेश्वर शायद कभी जेल नहीं गये ? कभी उस भीड़ में खड़े नहीं हुए जिस पर पुलिस ने घोड़े दौड़ाये। कभी डंडा बेड़ी की सज़ा नहीं पाई ? कभी रेत मिली रोटी जेल में नहीं खाई ? कभी अत्याचारी के शस्त्रों से झरते रक्त से अपने सीने को लाल नहीं किया ?

परमेश्वर ने कहा कुछ नहीं। आँख फाड़कर देखा।

सुरेशजी ने कहा : नीलकांत बहुत प्रिय था ? पर तुम पुराने तपे हुए सैनिक हो। तुमने अपना घर बरबाद कर दिया। फिर आज क्यों रोते हो ? वह मरा नहीं, वह अमर हो गया, जैसे शमशेर लाठी चार्ज में हुआ था, जैसे हमीद भूख-हड़ताल करके चला गया था। लाखों, लाखों माँ के लाल चले गये और चले जायेंगे। इनके घरों के आँसू अगर इकट्ठे कर लिये जायें तो शायद अंगरेज़ों की सारी सल्तनत उसमें डूब जाये ! परमेश्वर ने देखा। अकेला व्यक्ति। न आगे न पीछे वह था स्वयं, और ऐसा ही था वह सुरेश। जब इसको पहली बार जेल में डाला गया था, जब इसकी तीन पसलियाँ पुलिस ने लाठी चार्ज में तोड़ दी थीं और यह तीन दिन बेहोश रहा था, तब इसका लड़का—सात बरस का बच्चा बीमार होकर मर गया था। जब यह दूसरी बार जेल गया था तब इसकी स्त्री मर गई थी। इसके भाई इसे छोड़ गये। पहले इसके पास

घर था, वह बिक गया। अब केवल दफ़्तर ही इसका घर है। शांत। और नेताओं की सी ईर्ष्या इसमें नहीं। वज्र है! एक ध्येय! देश स्वतन्त्र होना चाहिये।

सुरेश जी ने दूर कहीं देखते हुए कहा : महाकाल के मुँह में सब धधक रहा है, नष्ट हो रहा है, भगवान ने गीता में कहा है, परमेश्वर! अपने को कर्त्ता मत समझो! समझो कि तुम निमित्त मात्र हो! परन्तु हो सव्यसाचि!

परमेश्वर की आँखों में आँसू से आगये। बाँये हाथ के कुर्त्ते की आस्तीन को उसने आँखों पर फेरा और कहा : लेकिन अब कमला को जब पता चलेगा, जब नीलकांत की माँ को पता चलेगा, तब क्या होगा···

सुरेश जी ने धीरे से कहा : युद्ध के हर बलिदान को दिखाकर हमें उसका सम्मान करना सिखाना होगा परमेश्वर! यह लड़ाई तो जाने कब रुकेगी! उनका वही होगा जो जुल्मों के जबड़ों में फँसे लाखों भारतीयों का हो रहा है। कोई अजीब बात थोड़े ही है! दुनिया में ऐसा पहले भी हो चुका है, और तब तक होता रहेगा जब तक संसार में हिंसा बची रहेगी।

परमेश्वर ने सिर झुका लिया।

मामूली बात

नन्दराम की बात सुनकर नीलकांत की माँ फूट-फूटकर रोने लगी। किन्तु शीला ने देखा कमला निस्तब्ध खड़ी थी। दो मिनट बीत गये। कमला ने भर्राये स्वर से कहा : उठिये माताजी ! वे कहीं नहीं गये हैं। वहीं होंगे।

शीला ने विस्मय और आदर से सिर झुका दिया। पहली बार नन्दराम ने अनुभव किया कि नीलकांत जैसी पानीदार तलवार को कमला के रूप में उचित ही म्यान मिली थी। स्त्री का हृदय इतना दृढ़ हो सकता है इसकी उसने कल्पना भी न की थी। नीलू की मां की आंखों का पानी अब रुक गया था। एक बार को जो सर्वत्र घोर शून्य दिखाई दिया था, उसमें अब कमला की मूर्त्ति उभर आई थी।

रात के साढ़े तीन बजे गाड़ी मथुरा पहुंच गई। सेठ राधारमण ने उतर कर मोटर का द्वार खोला। कमला, नीलकांत की माँ और शीला के पति जिला कांग्रेस कमेटी के दफ्तर में पहुंचे। अंधेरा था, शायद सब लोग सोए हुए थे। घनी सफेद दाढ़ी वाले पुराने नेता, जो बाबाजी कहलाते थे, अभी तक जाग रहे थे। उन्होंने आहट सुनकर द्वार खोला। लालटेन के प्रकाश में मद्धिम उजाला था।

'कौन ?'

'मैं हूं राधारमण।'

आवाज़ सुनकर दो व्यक्ति भीतर से निकले। कमला ने पहचाना। एक थे सुरेश जी, एक परमेश्वर। सुरेश जी के होठों पर एक करुणा फैल गई। परमेश्वर को एक धक्का सा लगा। वह जैसे इनके लिए तैयार नहीं था।

'नमस्ते माताजी !'

'जीते रहो बेटा परमेसुर !'

'आइये भीतर आइये।'

भीतर वे चटाई पर बैठ गये।

कमला ने देखा। सुरेश जी के चेहरे पर एक अजीब सन्नाटा था। परमेश्वर का मुँह कुम्हलाया हुआ था। राधारमण जी ने कहा : नन्दराम जी ने माँ और पत्नी को सुना दिया, वह जो मुझे मालुम हुआ था।

उस समय अचानक कमला दारुण वेदना से रो उठी।

कोई नहीं बोला।

कुछ देर बाद सुरेश जी ने कहा : बहन शांत रहो।

'शांत रहूं सुरेश जी। कमला ने सिर उठाकर देखा। गालों पर आँसू बह रहे थे। कहा : माँ का हक मुझसे कहीं ज्यादा था, जिसने उन्हें कोख में ढोया था, लेकिन आप लोग आदमी नहीं जानवर हैं जिन्होंने भेद छिपाया और हमें उस वक्त भी दावत खिलाई···

अब माँ फूट-फूटकर रोने लगी।

अचानक सुरेश जी ने कहा : शांत रहिये। लेकिन हम तब नहीं जानते थे।

परमेश्वर उस झूँठ से चौंक गया, पर वह कितनी अच्छी

झूँठ थी ! तो सुरेशजी का हृदय सचमुच भीतर से इतना कोमल है, यह तो वह कभी सोचता भी न था !

राधारमण जी ने हारे जुआरी की तरह कहा : जो भगवान ने भाग्य में लिखा है'''वे चले गये'''हमने भी कुछ पूर्व जन्म के पाप किये थे माँ जो यह दिन देखना पड़ा'''

'हाय मेरा बेटा चला गया'''

माँ रोती थी परन्तु कमला फिर गौरव से सिर उठाये देख रही थी।

परमेश्वर इस स्तब्धता से चौंका। ऐसा लगा जैसे वह सन्नाटा भी एक लाश थी जिसके चारों ओर वे लोग बैठे थे।

कमला ने कहा : सुरेश जी वे तो शहीद हो गये हैं न ? जैसे अमर शहीद भगतसिंह थे।

परन्तु नारी की दृढ़ता फिर अनन्त दुख की लहरों में बह गई और वह माँ की गोदी में सिर धर कर रोने लगी। उसका सुहाग भी तो लुट गया था !

राधारमण ऐसे बैठा था जैसे हठात् सारी कीमतें सारे भाव गिरकर उसे दिवालिया बना गये हों। उसने अपनी आँखों की सूनी दूकान में पलकों की हाट उलट कर दिवालियेपन का सूना चिराग़ जैसे दिन में ही जलाकर अपने सर्वनाश की स्पष्ट घोषणा करदी थी।

नीलकांत की माँ ने उस समय कमला की पीठ पर हाथ रखकर कहा : बहू ! वह चला गया। मैं उससे बहुत लड़ती थी न ? देश के लिये चला गया वह मेरा लाल ! बच्चा सा था वह तब, मैं उसे लेकर उन्तीस की कुम्भी नहान को गई

थी, उसके पिता भी थे साथ, तब कांगरेस की भीड़ें मथुरा में निकली थीं। उन पर पुलिस के घोड़े चढ़ गये थे, तब मेरा बेटा बोला था : अम्मा ! मैं भी लड़ने जाऊँगा। वह चिल्लाया था : भारत माता की जय !

वृद्धा सचमुच चिल्ला उठी। सुरेश जी की मुस्कान गाढ़ी हो गई जैसे गोंध था, होठों पर खिचती थी तो लोच लिये। वृद्धा ने फिर कहा : में डरती थी कि यह सब बड़े आदमियों के काम हैं, हमारे नहीं बहू ! तभी तो मैं हमेशा उसे इस रास्ते से दूर करना चाहती थी ! पर अब तो वह अपने ही रास्ते चला गया !

परमेश्वर देख रहा था। राधारमण कराह रहा था। केवल सुरेश जी स्थिर थे। निस्तब्ध। कमला ने अपना सिर उठाया और माँ की ओर देखा।

परमेश्वर ने उस अबला की पीड़ा को समझा और आँसू रोकते हुए पलकें भींच कर कहा : कमला बहन···मत रोओ···पर वह अधिक नहीं कह सका। उसका गला रुँध गया। सुरेश जी ने उसके कंधे पर हाथ रखा। उसे चेत हुआ उसने भर्राये स्वर से ही कहा : चुप हो जाओ बहन। भगवान ने चाहा तो वे कहीं नहीं जायेंगे, वे हमें फिर मिलेंगे। अभी तो पुलिस की जाँच पड़ताल जारी है। नदी वाली बात तो एक सुनी हुई बात है। यहाँ तो गुण्डे लोग धनीमानी यात्रियों को देखकर इस तरह लूटा ही करते हैं। हो सकता है भाई नीलकांत कहीं आत्मशुद्धि के लिये ही कहीं चले गये हों। वे पवित्रात्मा थे।

यह कितना सुखद विचार था। सास और बहू इस कल्पना को सत्य करने के लिये अपने को पूर्णतया कलुषित स्वीकार करने को तत्पर थीं। चिराग़ बहुत दूर जला सही, मगर किरन को पहुँचते देर क्या लगती है। अंधेरी रात में तो आदमी को एक जुगनू भी ज़िंदगी और दिन का निशान सा लगाता है।

'रोओ नहीं,' परमेश्वर ने स्वर को दृढ़ करते हुए कहा: 'वज्र भी गिरे तो रोने की ज़रूरत नहीं है बहन। माँ! नीलकांत मर तो नहीं गया। नीलकांत हमारी शक्ति था। अगर वह नहीं है तो भी वही अब हमारे हाथ में झण्डा बनकर आ गया है। माँ! देखो यही हैं सुरेश जी। घरवाली गई, बच्चा गया, वह स्वयं अपनी नहीं कह सका, पर उसके बारे में भी उसकी मुसीबतें सब जानते थे। वह कहता गया—एक दिन जीना है, तो मरना भी है। पर मरता वह है जो अपने लिये रहता है। वह नहीं जो दूसरों के लिये जान देता है। शहीद को सलामी दो बहन। तुम्हारा पति मनुष्य नहीं था, देवता था। माँ! तुम्हारा बेटा क्या था यह भी तो सोचो अगर वह नहीं भी है, तो उसने न जाने कितने ऐसे आदमी, कितने लाल छोड़े हैं जो तुम्हें पुकारेंगे माँ, माँ....

उसके स्वर में एक विचित्र कंपन था। माँ ने देखा। पत्नी ने देखा। सुरेश जी की मुस्कान अब फेल नहीं रही थी। राधारमण ऐसे बैठा था जैसे सत्यनारायण की कथा हो रही थी। शीला का पति घुटनों पर ठोड़ी लगाये, आँखें नीचे किये था।

'पर,' परमेश्वर ने कहा—'नीलकांत जी मिलेंगे हमें।

सुरेश जी को आज जागते हुए कई रातें हो गईं ।

पत्नी और माता ने देखा, और भी हैं जो ममता के भागी हैं। निस्स्वार्थ ही। क्योंकि मोर्चे का दूसरा सैनिक था न नीलकांत !

और कमला ऐसी बैठी थी जैसे अब वह अनन्त पीड़ा में जलने के लिये तैयार थी। ऐसा लगता था जैसे एक लहलहाता खेत ओलों की मार में सो गया था। माँ की असीम वेदना कराह बनकर उसके मन में उतर गई थी। परमेश्वर को लग रहा था जैसे वह बहक रहा है, वह जीवन के रुदन का भार नहीं समझता। दुख की मर्यादा की अनुभूति खो चुका है। राधारमण के सामने कमला का वैधव्य विकराल मुँह खोले खड़ा था। क्या रहेगा अब इसके पास ! शीला का पति, गली का दुनियादारी आदमी, सीधी बात जानता था कि अब जीवन भर कमला और नीलू की माँ के दो ही सहारे हैं, आँसू और कभी खत्म न होने वाला इंतजार।

कमला जैसे कुछ बोलना चाहती थी, पर कह नहीं पाती थी। जैसे उसमें अब शक्ति ही नहीं थी। जैसे कहते हैं सिकन्दर की माँ ने मरघट में जाकर पुकारा था—ओ सिकन्दर ! तब मरघट के कण-कण में से आवाज आई थी—कौन सा सिकंदर मैं हूं, मैं हूं, और बुढ़िया पराजित सी ठगी सी खड़ी रह गई थी, वही उसका भी हाल हो गया था। इस घुटन से उसकी व्यथा दुगनी हो गई। उसे लगा उस पर जो गौरव का प्रतिबन्ध था, वह एक बहुत बड़ा पाषाण था, जो उसे भींचे दे रहा था। तो क्या उसका पति नहीं मरा था ? क्या वह विधवा

नहीं हो गई थी ? क्या माँ का बेटा नहीं खो गया था ? क्या अपने बेटे को सदा के लिये छोड़कर उसका बाप चला नहीं गया था ? देश है, सुराज की चाहना है, पर शहादत का सुपना क्या उसके पति के अभाव में जीवित बनकर रह सकेगा क्या करेगी वह ? क्या करेगी अब ? अब कौन है जो मुस्करायेगा ? उन्होंने जो संबल दिया था वह क्या अब कभी नहीं मिलेगा ?

वह सिसक उठी।

'परमेश्वर भैया ! क्या···मैं अब भी विश्वास न करूँ कि वे···नहीं, नहीं, तुम ठीक कहते हो भैया···वे नहीं गये, वे नहीं गये···

'हाँ बहू,' वृद्धा ने कहा : 'वह मुझसे कैसे भी लड़ता था, पर जाते वक्त सदा ही कहकर जाता था, तो इस बार क्या वह बिना कहे चला जाता···

'हे भगवान !' राधारमण ने कहा।

शीला के पति ने धीरे से कहा : 'माँ जी !'

माँ के मन में अन्दर ही अन्दर था कोलाहल। वह बाहर नहीं निकल रहा था। अविश्वास के सारे पर्दे गिर जाना चाहते थे कि सारे सत्य को ढँक लें।

शीला के पति ने फिर कहा: भाग्य में जो लिखा है, वह तो भोगना ही पड़ता है। किसको पता था कि ऐसा होगा। जिस समय उन्हें लोगों ने जत्थे का नेता बनाकर भेजा था, तब क्या भेजने वाले जानते थे !

परमेश्वर के मुँह पर जैसे तमाचा सा पड़ा। सीधा प्रहार !

सुरेशजी मुस्कराये कहा: 'जानते थे।'

उस स्वीकृति को सुनकर शीला का पति भनभना गया। उसने चिढ़कर कहा : फिर आपने उन्हें क्यों भेजा ? स्वयं क्यों न गये ?

सुरेशजी ने धीरे से कहा: युद्ध में वे जीत गये थे भाई ! वहाँ उनका कुछ नहीं हुआ। होता तो भी कोई डर नहीं था, क्योंकि नीलकांत किराये पर नहीं लाये थे, स्वयं माता की सेवा करने आये थे, राजनीति में जो मरने आता है, वह किसी पर अहसान करने नहीं आता। किसी महान उद्देश्य को लेकर आता है। उसमें स्वार्थ कहाँ ? स्वार्थ होता तो गाँधी आज महात्मा बनते ! इतना ऐश्वर्य और वैभव छोड़ कर जवाहरलाल नेहरू जेलों में पड़े रहते। लेकिन वे अकेले चले गये, यह कह कर कि मै बच्चे के लिये खिलौने ले आऊँ...

उफ ! कमला ने बालों को नोंच लिया। वृद्धा छाती पीट पीट कर रो उठी। परमेश्वर ने शीला के पति की ओर अंगार दृष्टि से देखा। वह सोच रहा था, क्या सचमुच वह अपराधियों में से था ! विजय का यश मिलते समय सब ठीक था, और अब सब उल्टा होगया ? उसे लगा शीला का पति बड़ा अराजनैतिक व्यक्ति था, जिसे किसी तरह भी मनुष्य नहीं कहा जा सकता था, परन्तु शीला का पति कठोर दीख रहा था, जैसे अपने इस रवैये पर उसे जरा भी अफसोस नहीं था।

राधारमण जी ने सांसली : हरेराम ! हरेराम !

सुरेश जी ने देखा परमेश्वर एक गहरी चिन्ता में डूबकर चुप होगया था । उन्होंने कहा: बेचारे परमेश्वर जी की अवस्था बड़ी दयनीय है। परिस्थितियाँ ही बड़ी विचित्र हैं। पुलिस जाँच कर नहीं पाई है। अभी न तो लाश बरामद हुई है, न कोई पकड़ में आया है। हम लोग कल एस० पी० के बँगले पर गये थे। कहा भी कि मामला जल्दी तयबहो, लेकिन पुलिस की धाँधली कौन नहीं जानता। काँग्रेसी की मुसीबत से वहाँ तो किसी की मुट्ठी गरम नहीं होती । आप इतनी न घबराइए माता जी !

'नहीं बेटा !' बृद्धा ने लम्बी साँस खींचकर कहा: 'इतना सब भी तो मैंने ही देखा है, यह भी देख रही हूँ, और न जाने कितने पाप किए हैं कि अभी न जाने क्या क्या देखना है ! ऐसे ही वे चले गए थे, ऐसे ही यह भी छाती में घूँसा मार कर चला गया है। भगवान ने मुझे मौत नहीं दी।'

कमला का मन घुमड़ने लगा।

सफेद दाढ़ी वाले बाबा अब द्वार पर दिखाई दिए बोले सुरेश जी ! खाने का इन्तज़ाम करना है ?

सुरेशजी ने चारों ओर देखा । कमला के चेहरे पर अपमान झलक उठा । उसकी पलकों में रोष की छाया आगई। बृद्धा ने जैसे सुनाही नहीं । किन्तु शीला के पति ने कुछ उत्सुकता से एक बार कनखियों से बाबा को देखा और आँखे झुकालीं ।

परमेश्वर उठ खड़ा हुआ । उसने कहा: मुन्नू कहाँ है ?

उसके स्वर से लगा जैसे कहीं खो-तो नहीं गया !

शीला के पति ने धीरे से कहा : वह घर है। उसकी वहीं देखभाल होरही है।

अनाथ नादान बालक शायद करुण रूदन करके छटपटा कर माँ की गोद की चाहना लिये साँगमा होगा। टुकुर टुकुर छोटी छोटी आँखों से ताकता वह निराश होगया होगा। परमेश्वर को वह सब कचोटने लगा। कमला को उसकी याद हो आई। नयन सजल होगए। उसी के लिए तो वे खिलौने लेने गए थे। कितनी ममता होगी और परिणाम कितना भयानक निकला।

'शीला ने सुला दिया होगा उसे।' वृद्धा ने कहा। 'पर उसे लिए लिए डोला भी कहाँ जाता ?'

उसकी आँखों ने फिर शून्य को मानों प्रणाम कर दिया। दुख की घूंट पीकर वह सदा के लिए प्यासी रह गई।

परमेश्वर चला गया।

बाबा चाय बना लाये। केवल शीला के पति ने ही पी। बाबा को तो ऐसी आदत थी कि अहिंसा और चाय का मतलब उनके लिये एक ही था। सुरेश जी पीते नहीं थे और सास बहू के पीने का सवाल ही नहीं था।

वृद्धा थकी हुई सी लेट गई। कमला भी दूसरी ओर लेट रही। शीला का पति बाहर चला गया। इसी समय एक सिपाही दौड़ता सा आया। सुरेश जी ने कहा : कौन ?

'सुरेश जी !' सिपाही ने पहँचाना। 'आप ही तो उस दिन रिपोर्ट लिखाने आये थे !'

सुरेश जी ने स्वीकार किया।

'एस० पी० सा'ब थाने पर मौजूद हैं। उन्होंने आपको याद फ़र्माया है।'

स्त्रियां हड़बड़ा कर बैठ गईं।

कमला पूछ बैठी : कुछ पता चला।

सिपाही ने ऊपर से नीचे की तरफ देखा और कहा : कुछ गुण्डे पकड़ गये हैं। अभी पूरी तरह नहीं कुबूलते। आप आजाइयेगा जल्दी। मालूम हो जायेगा।

उसके जाने पर तीनों उठ खड़े हुए। द्वार पर ही शीला का पति लौटता हुआ मिला।

उत्सुकता लरजने लगी।

परमेश्वर एस० पी० के सामने बैठा था। उसने कहा : यह नीलकांत जी की माताजी हैं, यह उनकी वाइफ़ हैं। और आप···

'मैं जातता हूँ।' एस० पी० ने विनम्रता से कहा : 'तशरीफ़ रखिये।'

उसके स्वर में दया थी और व्यंग्य भी था कि आख़िर तो कांग्रेसी भी आकर झुके। हम न हों तो सारी अहिंसा धरी रह जाये।

'जी हाँ।' उसने कहा : 'वे सहज तो नहीं कुबूलेंगे। हम वह काम अपने रास्ते करेंगे, लेकिन फिर अखबार वालों का डर भी तो है। कल आप ही निकलवायेंगे कि पुलिस ने सिर्फ़ शक पर ही कुछ शरीफ़ आदमियों को थाने में बन्द करके मारा पीटा। साहब! अगर आपका राज हो जाये तो मैं नहीं

समझता गुण्डों को अहिंसा से कैसे काबू में किया जायेगा।'

उसकी हर बात परमेश्वर को काटे जा रही थी।

वृद्धा ने सरलता से कहा : अब पीटकर भी क्या होगा कप्तान सा'ब ! वह तो चला ही गया ! हमें अपना भोगना है, औरों की राम जाने !

एस० पी० खिसियानी हँसी हँसकर बोला : वह तो ठीक है, मगर यह तो कानून का मामला है न ? (कहते हैं पण्डों ने उन्हें रुपया देकर यह खून कराया।) किस क़दर ज़लालत है। मैं नीलकांत जी को जानता था। बड़े शरीफ़ आदमी थे।

उस समय उसके साफ़ मगर कठोर और चालाक चेहरे पर एक अजीब सा गर्व छा गया। सुरेश जी देखते रहे कि कुछ भी हो यह व्यक्ति जिस पद पर था, उस पद पर, उस व्यवस्था में, या शायद कभी भी आदमी शरीफ़ नहीं रह सकेगा।

परमेश्वर के मुख पर विषाक्त घृणा थी और शीला का पति कप्तान साहब के सामने कुछ दुबका सा, कुछ दबा सा बैठा था। कमला के नेत्र स्थिर थे, उसने कहा : 'चलिये परमेश्वर भाई !'

उसका स्वर नितांत कठोर था। 'जिसके पास पैसा है, वे हत्या करके भी छूट ही जायेंगे, जिसके पास देने को धन है, वे हमेशा ऐसे ही देते रहेंगे। कानून कानून का काम करे।'

परम्परा की वंदिनी स्त्री का वह रूप देखकर सुरेश जी भी चौंके। उसे खड़े होते देखकर सब खड़े हो गये। केवल एस० पी० अपनी तलवार मार्का मूँछों पर हाथ रखे बैठा

था। कमला के नेत्रों में घृणा थी। उसका सारा शरीर एक बारगी ही जैसे किसी भीषण घृणा में जल रहा था। वह आज एक तिनके की तरह हो गई थी, जो आँधियों पर चढ़ कर घूमने की उचंग से भर कर कहीं भी गिरकर मरने के डर को खो चुकी थी। उसे पहली बार यह अनुभव हुआ कि उसका जीना व्यर्थ था। उसका अस्तित्व वास्तव में इस संसार से मिट चुका था। उसका मन अब केवल घुटने के लिये रह गया था। वह जीवित ही काल के विकराल थपेड़े से आहत होकर जैसे मर गई थी। उसे थाने में लगा जैसे उसका दम घुट रहा था। उसे सब पर क्रोध आ रहा था।

राधारमण बाहर मोटर पर बैठा था।

उसने गाड़ी को दफ्तर के सामने रोका। कमला ने कहा: घर चलिये सेठजी !

वृद्धा तो न बोलती थी, न सुनती थी। सुरेशजी वहीं रुक गये। परमेश्वर और शीला का पति वृद्धा के पास बैठे। सारी यात्रा में कोई न बोला। कमला आँखें फाड़-फाड़ कर देखती रही, वृद्धा मानों सो गई थी। कमला का मुख कुछ डरावना सा लगने लगा था।

राधारमण जी ने परमेश्वर की ओर देखा।

हठात् वृद्धा ने कहा: बेटा ! आये हैं तो चलो, जमुनामैया का पानी देह पर डाल लें। इसी में तो मेरा नीलू खोगया है। मैं भी उसकी प्यास देख लूँगी।

परमेश्वर काँप उठा। एक विप्लव कमला के होठों पर छा गया।

यमुना की धारा कलकल निनाद करती शाँति का अनंत प्रवाह विस्तारित कर रही थी। उस धारा को देखकर कमला की आँखों के सामने कल्पना में वे चित्र दौड़ने लगे···नीलकांत का घुट घुट कर मरना···फिर लाश····

परमेस्वर चिल्लाया: आगे मत जाओ बहन···

वह शायद सुन नहीं रही थी···

वह तो लाश ढूँढने उतरी थी···

अभी पानी गहरा नहीं था···

शीला का पति बढ़ा और उसने कमला को पकड़ लिया।

वृद्धा ने पुकार कर कहा : अरी जमुना मैया ! ले जा इस अभागिन को। उसे निगल गई तो मुझे क्यों छोड़ गई। आँसुओं से ढकी आँखों के धुँधले प्रकाश में उसे लगा जैसे उसका बेटा उस धारा में बहा चला जारहा था। यमुना की काली धारा साँपिन की तरह उसके मोतियों से आँसुओं को पीगई।

कमला सोचती थी···

वह विधवा है···

यह हत्यारी नदी ही तो उसके सुहाग को खागई है···

डायन···

एक असह्य घुटन फिर छटपटाने लगी।

हृदय नहीं है इस धारा के ?

पिशाचिनी !

और यमुना उसी मंथर गति से बही चली जा रही थी। विषैले विचारों ने ही जैसे उसे नीला कर दिया था।

शीला का पति उसे किनारे खींच लाया।

तब कमला बालू पर गिरकर निस्सहाय सी तड़पने लगी। जैसे वह एक मछलीं थी। वह रोती जाती थी किन्तु उसके मन का भार कम नहीं होता था। आज उसकी अन्तर्वेदना स्वयं नदी की धारा की तरह उमड़ी पड़ रही थी।

उसे रोता देखकर उनके चेहरे विषाद से मलिन और निष्प्रभ होगये। परमेश्वर के लिये उसे देखना असह्य सा होगया। उसने आँखे मींच लीं मानों वह एक कड़वी घूँट पीने की चेष्टा कर रहा था। उसने करूण स्वर से पुकारा: भाई नीलकाँत···कहाँ चले गये हो···

वह भर्राई आवाज़ सुनकर वृद्धा हठात् हँसी और बोली: वह रूठ कर चला गया है परमेसुर···वह अब नहीं सुनेगा···

राधारमण ने कहा : हरे राम ! हरे राम !

शीला के पति ने देखा वृद्धा मूर्च्छित सी बालू पर लेट गई थी।

'मुझे भी निगल जा डायन। मुझे भी लील जा···'

कमला सिर पटकने लगी···

राधारमण ने डाँटा : परमेश्वर जी। होश में आइये।

शीला का पति वृद्धा के मुँह पर पानी के छींटे देने लगा···

कमला तब भी रो रही थी, रो रही थी···

इलाज की जलन : कटे पर नमक

घर आकर देखा दरवाजा खुला था और शीला अन्दर चौक में बैठी मुन्नू और शशि को एक खेल में लगाकर हँसा रही है। कमला द्वार पर खड़ी हुई। मोटर दूर ही छोड़ दी थी। उसमें चढ़ना जीवन का सबसे बड़ा व्यंग होगया था। परमेश्वर और राधारमण चले गये थे। शीला का पति वृद्धा को लेकर घर गया था और कमला आई थी मुन्नू को लेने।

घर देखकर वह रो पड़ना चाहती थी, मगर मुन्नू की हँसी सुनकर वह सहसा ही रुक गई। उसके मन ने कहा : रोकर भी क्या होगा कमला ! अब मत रो। इस फूल की हँसी को क्यों मसलती है !

किन्तु शीला को देखते ही वह नहीं रुक सकी। उसके वक्ष से लिपट कर वह कातर स्वर से रोने लगी।

मुन्नू ने दौड़कर आँचल पकड़ लिया और माँ को रोते देख वह भी रोने लगा। उसे जो हर्ष हुआ था कि माँ आगई, वह एक विस्मय में बदल गया और फिर भय ने उसे घेर लिया।

'क्यों रोती हो माँ ! पिताजी कहाँ हैं ?'

शीला ने कहा: 'कमला बहन ! धीरज धरो। जो होना था सो तो हो चुका। अब इस नन्हें की तरफ भी तो देखो !

कब तक रोती रहोगी। रात और दिन, दिन और रात अब तो रोना ही बाकी रहा है बहन। अब तो इस बच्चे पर छाती दो। यही तुम्हारी नाव को पार लगायेगा। आखिर तो संतोष करना ही पड़ेगा। गिनी सासों का उधार कौन देता है! इतने ही दिनों का साथ था। मत रोओ!'

शशि ने पूछा : चाचाजी नहीं आये?

'चुप रह।' शीला ने डाँटा।

'वह नहीं आयेंगे बेटी!' कमला गाय की तरह डकरा उठी। उसने दोनों को भुजाओं में भर लिया और छाती से लगाकर फूट-फूट कर रोने लगी।

रोने का इतिहास आँसुओं से ही तो लिखा जाता है! उसका अन्ततोगत्वा मूल्य ही कितना।

जब वह घर गई, देखा वृद्धा अपने छोटे से ठाकुरजी के सामने पड़ी औंधी रो रही थी।

यों भयानकता अब जम गई। घर होगया सूना। मौत की चिट्ठियाँ सभी मिलने-जुलने वालों और संबन्धियों को भेज दी गईं। शीला ऐसे काम करती रही, जैसे जो कुछ था उसी का उत्तरदायित्व था। सांसारिक कार्यों में शीला का पति बहुत चतुर और भला साबित हुआ, जिसकी शायद शीला को भी आशा नहीं थी। आने वालों के आने-जाने से मौत दर्द न रही, एक रस्मअदायगी होगई, और उसकी कचोट के कोने जीवन के कठोर यथार्थ की चोटों से घिसने लग गये। विगत स्मृतियाँ टीस जगातीं। हृदय वेदना के झोंके में थरथराते, आँसू में कसकती पीड़ा पिघलती, कल्पनाएँ शून्य के

हाथी में अंकुश की तरह गड़तीं, परन्तु सुख एक बैरागी की तरह यौवन की वीणा का आशा रूपी तार तोड़ कर जीवन से चला गया।

भाई की मौत की खबर सुनकर नीलिमा रोती हुई घर आई। बेटी को रोता देखकर माँ भी रोई और अब कमला उदासी की नींवों पर मौन इमारत सी रह गई। नीलिमा रोई तो कमला की सोई यादों को फूटते घाव सी कुरेदती चली गई और उसने उसे ऐसा रुलाया कि वह सिसकियों की शरशैय्या पर छटपटाने लगी। घर में नरक होगया।

वृद्धा ने ही अन्त में कहा: मत रो बेटी ! उसने इतने ही दिनों के लिये तुझे भैया दिया था ! अब सबर करके बैठ। वह कभी नहीं आयेगा।

नीलिमा का रोना बंद हुआ तो उसकी यादें जाग उठीं। भैया यहाँ यह करते थे, वहाँ वह करते थे, भैया ने ये कहा था, भैया ने यह नहीं कहा था, कि वह मानों उठे हुए ज्वार की वार बार उमड़ती लहरों का संघात होगया जिसने वृद्धा को अर्द्धविक्षिप्त कर दिया और कमला ऐसी होगई जैसे वह पथरा गई थी।

व्यवहार के दिन भी बीत गये।

क्रिया-कर्म समाप्त हो गये। बारह ब्राह्मणों और कौओं ने पितरों को खानपान पहुँचादी। घर, मुहल्ला, शहर, सबमें चर्चा फैली, सिमटी, और फिर सब जगह तो आई गई हुई केवल परिवार में नीलकान्त की याद का साँड़ सास-बहू के हृदयों के कगारों को सींगों से तोड़-तोड़ कर दरिद्रता की नदी

में बहाता हुआ भविष्य के अन्धकार की तरह डकराने लगा।

'तो, नीलिमा ने कहा: 'अम्मा ! फिर मैं जाऊँ ?'

'बेटी ! थोड़े दिन और रुक जा न ? अभी तो घर काटे खाता है। तू रहेगी तो बिचारी कमला का भी जी बहलेगा ही।'

'हाँ अम्मा ! ठीक कहती हो। बिचारी को क्या सुख रहा है अब। भाभी का तो सुहाग ही उजड़ गया। अब तो दिनों को धकेलना है। भाभी ! ठहर जाऊँ ?'

कमला ने आँखें उठाईं और कहा: 'क्या पूछती हो बीवी! तुम्हारा ही तो घर है।'

नीलिमा ने व्यंग का व्यंग पाया तो कहा: 'मुझे तो अम्मा ने पहले ही निकाल दिया। भैया की गमी में आई हूँ भाभी। अम्मा ! आज रात तो बाहर शीला के सो रहती हूँ। कल लौटूँगी रीत तो यही है। फिर काँगरेसी घर है तुम्हारा। आरिया ❀ तो ऐसा नहीं मानते।'

कमला रसोई में चली गई। फिर भी स्वर सुनाई दिया: अम्मा ! भाभी ने भी नहीं रोका भैय्या को ! यह डायन कांगरेस आखिर खाके ही रही ! हत्यारी।

कमला की सारी दुनिया मुन्नू में इकट्ठी होगई। वृद्धा का भी एकमात्र संबल वही हो गया।

मेरा मुन्नू बेटा।

मेरा लाल !

कमला एक आह भर कर साँझ की घुमड़ती छाया देखती

❀ आरिया=आर्यसमाजी

जहाँ सूनी आँखें व्यथा लिए देखतीं कि दिन का प्रकाश मिटा जारहा है और अन्धकार का साम्राज्य घिरता आ रहा है। वृद्धा के मन में एक आग सी जलती, जिसका कोई ओर-छोर नहीं था, केवल मुन्नू ही उसमें अकेला छींटा था अमृत का।

कमला को मुन्नू भविष्य की आशा का प्रतीक था। उसके सामने और कोई पथ नहीं था। उसकी कल्पना में प्रभात के मन्द और शीतल समीरण की सुषमा थी। अन्धकार जो पलकों पर बोझिल बन कर रहता वह उजाला बन जाता। और तब वह उन्हें मूँद लेती कि कहीं यह भी पराया बनकर चला न जाए और वह फिर घोर अंधियारे में कराहती रह जाए! सन्तोष की रेखा अभाव के बादल की किनारी पर चमकती और फिर उसे लगता जैसे एक बहुत फैला हुआ रेगिस्तान था जिसमें अचानक एक जगह पानी का सोता फ़ुट निकलता और फिर एक छोटी सी मगर गुन्जान हरियाली पैदा हो जाती, जहाँ न जाने कहाँ से आकर बैठा हुआ एक पक्षी मीठे स्वर से चहकने लगता। फिर उसे लगता कि बहुत बड़ी और भारी सूखी चट्टान थी। उस पर एक छोटा सा पौधा थाकिसी सन्धि में। उसी पर, हाँ उसी पर एक छोटा सा, बहुत छोटा सा फूल खिल गया। और फिर वह अनन्त आकाश को देखता, विशाल चट्टान पर अकड़ता, अगाध शून्य में मुस्कराता। तब मरी हुई सोती धूल पर मानों जीवन नवीन उल्लास लेकर नाच उठता। वह मुन्नू को छाती से लगाकर भविष्य की रंगीन कल्पनाओं में भूल जाती।

× × ×

मुन्नू ने कहा : माँ ? मैं कल शशि के घर गया था न ? वहाँ मैंने एक रीछ देखा ।

कमला ने आँखें उठाकर देखा। मुस्कराई। शायद कोई तमाशा करने वाला आया होगा। किन्तु बच्चे कभी-कभी ऊपर चढ़ाकर एकदम नीचे गिरा देते हैं। वह कहता गया : माँ! अपने पैर उठाकर चलता था, सिर हिलाकर सूँसूँ करता था…ऐसे…

थोड़ी देर तक मुन्नू में मानों रीछ की आत्मा उतर आई। उसने रीछ का पार्ट किया। फिर हठात् रुककर कहा : माँ ! चाभी देने से सब करता था !

कमला नीचे गिरी। उसे हँसी आ गई।

सचमुच का नहीं था माँ ! सचमुच का तो आदमी को खा जाता है न ?

फिर स्वर बदल गया।

माँ ! मुझे भी वैसा रीछ चाहिये माँ !

कमला मन ही मन हतप्रभ हुई।

पैसा। अब कहाँ से आयेगा पैसा ?

कमीनेपन और शराफ़त की बुनियाद पैसा !

जिसको अति में इंसान हलक में उँगली डालकर कै करता है, और जिसके अभाव में वह अपनी आत्मा को आँतों की तरह मरोड़कर दिखा-दिखाकर ज़माने के थूक चाटता है—वह पैसा !

जो हो तो सितारों से मीठी झंकार आती है, वर्ना उसके

विना लगता है कि आकाश भी अंगारों से सुलग रहा है—वह पैसा !

पैसा—यानी ममता का आधार ! पैसा नहीं, अर्थात्–स्त्री की लाज की जलती चिता !

आदमी जिसके बल पर शेर, जिसके बिना कुत्ता—यानी पैसा !

नीचे से आवाज़ आई : बहू । ज़रा नीचे आना !

कमला ने मुन्नू को गोदी में उठा लिया और नीचे जाकर देखा कि परमेश्वर बैठा हुआ सास से बातें कर रहा है । नन्द पास बैठी है । कमला ने नमस्ते की । मुन्नू ने भी । परमेश्वर ने उत्तर दिया और मुन्नू उसकी गोद में जा बैठा । कमला धरती पर बैठ गई ।

वृद्धा ने कहा : बहू ! ये कह रहे हैं कि आज शाम को एक सभा करेंगे । कुछ लोगों की इच्छा है कि वे नीलकांत के घरवालों को कुछ धन इकट्ठा करके दें, ताकि मदद हो जाये । ये कहते हैं रुपया कुछ हो गया है, कुछ हो जायेगा । हमें सभा में चलना होगा । अब सोच लो ! मैंने तभी तुम्हें बुलाया है ।

कमला ने सुना । बात हथौड़े की चोट सी उपचेतन में कहीं जाकर बज उठी । आत्मसम्मान ने व्यथा की विशाल चादर के नीचे ढँके जाने के पहले करवट ली । एक धक्का सा लगा । उसे लगा वह बहुत ही निरीह थी, मुन्नू भी, माताजी भी । नीलिमा घूर रही थी । उसकी दृष्टि से कुछ भी पता नहीं चलता था कि वह क्या चाहती थी । कमला ने देखा परमेश्वर के मुख पर करुणा थी, दया थी और थी याचना ।

कैसा अजीब लगता था वह ! गर्व और विनम्रता से झुका सा।

कमला बिना सोचे ही वेग से कह गई : नहीं माताजी ! हमें धन की क्या जरूरत हैं। कौन से हमें चाँदी के महल बनाने हैं ! जब वे ही नहीं रहे तो यही धन कितने दिन चलेगा ! इससे क्या हमारी खुशी लौट आयेगी ?

फिर उसने परमेश्वर की ओर मुड़कर कहा : रहने दो भैया ! रहने दो। हम गरीब हैं पर इसी में इज्जत रही है कि आज तक किसी से माँगने नहीं गये। अब दुनिया हमें गरीब कहकर हमारी हँसी करेगी ! रह लेंगे हम तो किसी तरह, मेहनत मजदूरी करके, पर क्या उनके चले जाने के बाद अब भीख माँगकर खानी होगी ?

धारा शायद और भी खलबलाती लेकिन परमेश्वर का स्वर बीच में ही काट गया।

'नहीं कमला बहन ! तुम तो गलत समझ रही हो। कौन कहेगा तुम्हें कुछ ! हममें से तो किसी ने भी ऐसा नहीं सोचा। तुम हमारी बहन हो, यह हमारी माँ हैं। अब क्या तुम लोगों के लिये हमारी कोई भी जिम्मेदारी नहीं है ? हमने सुरेश जी से भी पूछा था। उन्होंने कहा कि हर सेना के सैनिक को कुछ मिलता है। यदि नहीं मिलता तो वह खायेगा क्या ? अगर वह काम करेगा और खाने को नहीं पायेगा तो ज़रूर कुछ बेईमानी करेगा। सुरेश जी ने कहा था, लेकिन उन्होंने यह भी कहा कि राजनैतिक जीवन की यही सबसे बड़ी खराबी है। जब तनख़ा पाकर सैनिक लड़ता है,

तो वह पैसे का गुलाम बन जाता है और वे ही सदा नेता बन सकते हैं जिनमें पैसे की ताक़त हो। पर कमला बहन, यह सब तो है, फिर भी इससे भी तो इंकार नहीं किया जा सकता कि दुनिया में रहने के लिये पैसा ही चाहिये। पैसा आता नहीं यों ही। वह दो ही तरीकों से आता है। मेहनत से, या पैसे से। मेहनत से जो पैसा आता है, वह सिर्फ पेट भरता है और जो पैसे से आने वाला पैसा है, वह किसी दूसरे की मेहनत से आता है। सुरेश जी कहते थे कि इंसान का पेट एक बहुत बड़ी दोज़ख है। उसमें भगवान ने न जाने कितनी भूख भर दी है ! सोचो ! जो होनी है, वह होती है। उसे तो कोई मिटा नहीं सकता, लेकिन हम एक काम कर सकते हैं। जो राज की फौज में मरता है, उसे सरकार देती है, जो जनता की सेना में मरता है, उसे जनता देगी।

कमला ने गरदन नीची करके सुना।

नीलिमा ने ऐसे देखा—जैसे ओहो! लाड़ली। रस्सी जल गई, पर ऐंठन न गई। दो दिन में खाने के लाले पड़ते ही सब छठी का दूध याद न आजाये तो कहना।

बोली : अम्मा ! बेचारे परमेश्वर जी को क्यों दुबिधा में डालती हो। नहीं चाहतीं मदद तो दो टूक कह दो न ? नाते रिश्तेदारी दोस्ती तो उनकी ही मदद को होती है, जो एक सहारा ढूंढ़ते हैं। ऐसे समर्थ को क्या कुछ चाहिये जो लेने का नहीं देने का दम रखता हो ! भइया आये हैं ये, क्यों ? देस-फेस को तो कोई एक नहीं, कई मरते हैं। यह चंदा तो ये बिचारे कराते हैं क्योंकि नीलकांत भैया से इन्हें प्रेम था !

बात वह व्यक्तिपरक बन गई। अब कमला क्या कहे। व्यंग तो था ही।

परमेश्वर ने नरम जगह टटोली। कहा : माताजी ! आप ही समझाइये न इन्हें। आपको तो दुनिया का अनुभव है। न जाने कमला बहन क्या समझ रही हैं !

नीलिमा ने गर्दिश की झलक की तरफ इशारा करते हुए मानों गरदन हिलाई। उसकी आँखों में कठोर सत्य की ओर इंगित था।

वृद्धा की मन की निर्बलता दुतरफ़ा चोट से व्याकुल हो रही थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि इसमें हर्ज ही क्या है? किसी के द्वार पर भीख तो नहीं माँगी जाती है? बल्कि इसमें तो इज्जत ही है। नीलू तो नहीं रहा। पर उसके नाम का ऐसा परताप है कि लोग खुद देना चाहते हैं। कौन किसी को देता है। लोग कहते हैं गाँधी जी खड़े हुए। औरतों ने झोली में गहने उतार उतार कर डाले। झोली भर गई तो गाँधी जी ने वहीं खाली करदी और कहा: खाली हो गई, फिर भरो। औरतों ने फिर झोली भरी। नीचे पड़ा माल किसी ने छुआ तक नहीं। गाँधी जी भीख माँगते हैं तो क्या घट जाते हैं ! नीलू के पिता कहा करते थे कि मदनमोहन मालवीय ने हिन्दुओं का कालेज वनवाया था। काशीराज ने दान दिया। मालवीय जी कई जगह तो राखी बाँध कर बामन बन कर दच्छिना लाये थे। कोई क्या उन्हें भी भिखारी कहता है ! वृद्धा ने मन्द स्वर में समझाते हुए कहा : बहू ! ऐसी कोई बुरी बात तो नहीं है। जब ये इतना कहते हैं तो

क्या अब इनका मुँह यों ही चल कर रह जायेगा ! हम किसी से भीख माँगने थोड़े ही जा रहे हैं।

परमेश्वर ने फौरन तार खींचा : हाँ माता जी। देखिए न ? मैं भी यही तो कह रहा हूँ। कमला बहन समझती ही नहीं।

कहाँ तो वह यह समझ कर आया था कि उसका प्रस्ताव सुनते ही सब लोग कृतज्ञता के भार से दब जायेंगे। यहाँ उल्टे उसे अहसान लेने की नौबत आई। उसे कमला के गर्व में जली हुई रस्सी की ऐंठ दिखाई दी। उसने आँखें उठकर देखा। किसका होगा यह गर्व ! रूप का। खासी है। अचानक किसी ने कहा : कहीं सुरेशजी का यह प्रस्ताव इसीलिए तो नहीं आया था ! मन भीतर ही भीतर कड़वा हो उठा और इच्छा लरजने लगी। वह कुछ व्याकुल हो उठा। उसने पूछा अपने आपसे, मैं भी तो परिवारहीन हो गया हूँ, फिर इसी विधवा से इतनी सहानुभूति क्यों ? पुरुष को समर्थ माना जाता है तो क्या वह किसी की सहानुभूति का अधिकारी नहीं ! अब यह स्त्री तो छिप कर भी न जाने क्या क्या कर सकती है, किंतु पुरुष को सहज प्राप्ति कहाँ ! सुरेश जी की याद आई तो मन और तिक्त हो गया। एक स्त्री में कितना बल होता है कि परमेश्वर को अकारण ही सुरेश जी में छल दिखाई देने लगा। उसने मन ही मन कहा : ढोंगी ! तुम्हारा यह सुपना तो पूरा नहीं होने दूँगा। फिर उसने खिसियानी हँसी हँस कर कहा : तो ठीक है माता जी। यह भी ठीक ही है जो कमला बहन कहती हैं। धन न सही,

लेकिन आप लोगों की इज्जत तो इससे कहीं अधिक बढ़ जायेगी। माँगने जाकर आदमी छोटा हो जाता है, और जिसे मिलता हो, वह मना करदे, ऐसे ही तो महात्मा गाँधी और जवाहरलाल नेहरू हैं। रुपया जो हो गया है उससे नीलू भाई का स्मारक बनवाया जायेगा। वह तो जनता दे चुकी।

वृद्धा को कुछ सूझा ही नहीं। कमला को लगा भूल हो गई। नीलिमा के नेत्रों के अँगारे धधक उठे। उसने हठात् कहा : बुरा मान गये परमेश्वर भाई! भाई के सदमे ने भाभी की अकल बिगाड़ दी है। वह अपने को देख रही हैं, बच्चे को नहीं देखतीं। पहाड़ है यह। कोई तजरबा हो तो बात करें। आपने इत्ती सोच के यह बात कही, हमें तो अम्मा! इनका अहसान मानना चाहिए! अरे आजकल भाई भाई का गला काटता है।

परमेश्वर ने नीलिमा को ऐसे देखा जैसे कभी पृथ्वी ने वराह भगवान के उद्धारक दाँत को देखा होगा। नीलिमा के नयनों में न जाने कहाँ से इतना सहज रस आ गया था कि परमेश्वर कमला को भूल गया। नीलिमा के अपलक देखते नयन उसे अच्छे लगे। उसे खीझ हुई कि वह क्यों इतनी जल्दी रूठ गया। सुहागिन के डोरे में उलझन का डर नहीं, विधवा के में तो हज़ार गाँठें हैं जो सुई के छेद में कभी क्या सहज पुबने देती हैं।

परमेश्वर ने कहा : माँजी। कमला बहन को रहने दीजिये। अब आप ही फैसला कर डालें।

'बोलो न भाभी !' नीलिमा ने दाबकर कहा।

कमला ने कहा : नन्द जी ! मेरा मन भर आया। मैं समझी थी परमेश्वर भइया को लोग बुरा-भला न कहें। मैं मना थोड़ा ही करती हूँ। अब इन्हीं का तो सहारा है !

परमेश्वर मारा गया। हालत यह थी कि चोरी से लाये थे किसी की अंगूठी और पहन ली जल्दी में, सो उँगली में फँस कर दर्द करने लगी। नीलिमा ने बहुत खींची, खींची, मगर कमला ने तो मक्खन लगा के झट सरका दी, फिसल कर निकल गई ! बोला : दीन असहाय की तरह सभा में नहीं बैठोगी बहन। किसी अमीर का अहसान न होगा। लहू का मोल नहीं है जो चुक जाये। यह तो अपनी माटी का सहारा है। उनके रहते तुम न जातीं, पर तब सीढ़ी साथ थी बहन। बच्चे का ध्यान करोगी नहीं ? अभी तक तुम्हारा मन उदास है। धीरज धरो। जो गया वो तो आयेगा नहीं।

माँ ने आँखें पोंछी।

कमला ने नीचे का होठ दाँतों में दाबकर आँखें झुकालीं।

परमेश्वर ने कहा : 'तो सभा का निश्चय हुआ न ?'

'आयेंगे हम !' कमला ने भारी स्वर में उत्तर दिया।

'नीलकांत की आत्मा को सुख होगा जब वह इस बेसहारा बच्चे को फलते-फूलते देखेगा !' परमेश्वर ने तुरपचाल चली। एक हाथ से माँ का हाथ पकड़ कर जब विधवा का बच्चा दूसरे हाथ से किसी अन्य का हाथ पकड़ता है, तब विधवा उसकी दूसरी तरफ के व्यक्ति को भी विश्वसनीय समझने लगती है।

परमेश्वर ने माँ की ओर देखकर कहा : तो माताजी मैं चलूँ । शाम को चार बजे मीटिंग पार्क में रखी है । मैं किसी को उस समय भेज दूँगा । आप सब उसके साथ आजाइयेगा.।

चलते समय परमेश्वर ने मुन्नू को अपनी गोद में उठाया और उसका गला चूमकर, प्यार से उसके सिर पर हाथ फिरा कर मुस्करा कर चला गया।

कमला उदास सी बैठी रह गई। नीलिमा ने कहा : भाभी उठो ! माँ तुम्हारे लिए इतना कर रही हैं। अब भी खुश नहीं हो ?

कमला कैसे कहे कि वह खुश तो अब कभी होगी ही नहीं। जीवन को अन्न चाहिये, देह चाहिये, स्नेह चाहिए, समर्पण चाहिये, परम्परा चाहिये । पर यह सब वह नहीं समझती । वह तो समझती है कि स्त्री को पति चाहिये । नीलिमा कहती गई : एक तुम हो कि कोई कहे कि अब जो हुआ सो हुआ, आगे की चिंता करो, तो तुम कहो—नहीं, रहने दो अपना सुख । अरे कब तक करती रहोगी । इसमें क्या इज्जत जाती है हमारी !

कमला चुप रह गई। उसने धीरे से सिर उठाया। नीलिमा उत्तर चाहती थी । कमला ने धीरे से कहाः नहीं बीबी ! मैं कब मना करती हूँ । माताजी ने 'हाँ' कहा तो मैं 'ना' कहने वाली कौन ? मैं चलूँगी ।

अंतिम वाक्य बहुत बोझिल था। वह उठ गई। भीतर से सुना नीलिमा कह रही थी। अम्मा ! भाभी तो ऐसी हो गई है जैसे पैसे की क्या चिंता। अरे कौन जाने ? होगा या

तो इनके पास। भइया तुम्हें कौन सा हिसाब देते थे। तुम तो न जाने कब से हाथ खींच बैठी हो! और फिर मायके का बल तो बहुत होता है अम्मा! ब्याह में न दिया, तो क्या अब भी न देंगे वे! कुछ तो भाभी ने सोचा ही होगा।

कमला द्वार पर दिखी। नीलिमा ने कहा: भाभी मैं नहा लेती हूँ। पानी भर कर रख दिया है न?

कमला ने कहा: हाँ।

कमला अकेली बैठी रही। वृद्धा नीचे थी। मुन्नू अपने काम में लगा था। काफ़ी दिन चढ़ आया। कमला रसोई में चली गई।

दिन की चंद घड़ियाँ केले का तना बन गईं। विचार तो पात में से पात की तरह निकलते चले गये। सूरज आसमान की कमान पर झुके तीर के फलक सा चमक कर तिरछा हो गया। वृद्धा की कल्पनाएँ बहुत ठोस थीं। जिस दुश्चिन्ता ने उसे घेर लिया था, जैसे उससे उसे कुछ क्षणों को मुक्ति सी मिल गई थी। रह-रह कर नीलकांत की याद आँखों के सामने आ जाती थी।

नंदराम नीचे रुक गया। सास और बेटे के साथ जब ननद के पीछे पीछे, कमला मंच के पास पहुँची, लोगों में एक कौतूहल छा गया। सबकी आँखें इनकी ओर खिचकर रह गईं और लोगों में कानाफूसी मच उठी।

'यह कौन है?'

'यही तो उसकी लुगाई है।'

'बेचारी।'

'अब काहे की बिचारी !'

'क्यों ?'

'अब तो इसकी इज्जत का वक्त आ गया है !'

'अरे हटो भी ।'

फिर मंद हास्य ।

फिर कहीं—'कैसे-कैसे जुल्म हो रहे हैं ।'

'कंस न रहा ।'

'भगवान की मर्जी ।'

फिर स्त्रियों में । 'रुपया मिलेगा ।'

'क्यों ?'

'नहीं पूछती हूँ ।'

'तो भी तो ।'

'ऐसे कब तक मिलेगा ?'

'क्यों ! ऐसी औरतें तो क्या न कर दिखायें ? जनम जिन्दगी मरे के लिये आँसू बहाएँ और गुलछर्रे उड़ायें ।'

'हाय रहने भी दो । दया करो ।'

फिर कहीं—'देश पर कैसीं मुसीबत छाई है !'

'क्यों नहीं ।'

'अब इस बच्चे का कौन है ?'

'कोई नहीं ।'

'जो है सो बिचारी माँ है ।'

'अरे माँ बिचारी क्या बाप बन जायेगी ?

एक और—'क्या कहते हैं ! स्त्रियाँ जिस देश में वीर न

होंगी, वहाँ की सन्तान क्या होगी ?'

कमला ने धीरे से आँखें घुमाईं। एक बार डरते हुए भीड़ की ओर देखा और इस तरह उत्सुकता से बातें करती भीड़ देखकर उसे अच्छा नहीं लगा। वृद्धा का मुख था गंभीर! निरासक्त। उसके लिये अब कुछ नहीं रह गया था। चपल थी तो नीलिमा जो मानों आँखों से सब-कुछ पढ़ लेना चाहती थी। मुन्नू था घबराया सा, भीड़ में चमत्कृत। देखा। परमेश्वर विजयी की तरह गर्व से बैठा था। उससे भी अधिक गर्व झलक रहा था सुरेश जी की विनम्रता में। नंदराम सदा की भाँति इस वक्त भी मुस्करा रहा था, क्योंकि सदा ही किसी अन्य नेता की जय बोलने वालों में था। शीला भी पति के साथ आई थी, परन्तु वह जो इतनी निकट थी इस समय वह कमला से कितनी दूर हो गई थी। पर मुन्नू ने जब शशि को देखा तो उसकी आँखों की प्रसन्नता उसे बहुत निकट ले आई।

कमला को लगा। सारी भीड़ उसी के वैधव्य को भीख दे रही है। वृद्धा को कुछ लग ही नहीं रहा था। वह उस बादल की तरह थी, जिसका वज्र घुमड़कर भीतर ही रमकर जला रहा था। नीलिमा की आँखें गम्भीर थीं, परन्तु तरुणों की आँखें धोबी के कपड़ों की तरह उसे घाट पर पत्थर समझ कर उस पर पछाँरें खा जाती थीं।

कमला को सहसा याद आया। आज वे होते तो क्या इस दीन दृष्टि से सब उन्हें देखते ! तब कितना गौरव होता।

यह महानता एक करुणा पर थी, वह लघुता भी जो उपेक्षा पर निर्भर थी, इससे कहीं अच्छी थी।

जीवन की गति उस साँप की तरह हो गई, जो अपनी भूख में भूला अपनी ही दुम को मुँह में भरकर समूचा निगल जाना चाहता है, अपने आपको। पल में कुछ और पल में कुछ और इसी तरह सोचते हुए हृदय एक परवशता की आह भरकर फिर बहल गया, क्योंकि जहाँ अनेक स्त्री-पुरुष होते हैं, वहाँ अहं प्रायः कुण्ठित होकर दब जाता है। अकेले में जो पीड़ा बहुत भयानक लगती है, जन-संपर्क में उसको साधारणत्व प्राप्त हो जाता है, अपना गर्व अपने सिर को झुका देता है।

सभा की कार्रवाई शुरू हुई। परमेश्र बड़े गौरव से उठा और उसने अपील पढ़ी जिसमें बताया गया था कि साथी नीलकांत का बलिदान जनता के लिये हुआ था। जनता का कर्त्तव्य था कि वह अपना उत्तरदायित्व समझती और उसके छोड़े काम को पूरा करती। इसी का प्रारम्भ था—उनके परिवार की सहायता करना। और तब परमेश्वर नीलकांत के जीवन के बारे में अपने संस्मरण सुनाने लगा और इतना द्रवित हो गया कि वह रो उठा। तब परिवार के लोग भी रोने लगे परन्तु कमला ने भींगी आँखों से देखा वृद्धा के सूखे होंठ का सिर्फ़ बाँया कोना ज़रा सी मुस्कान ने उमेठा और शेष वह गंभीर बैठी रही। भीड़ में कुछ ने सांसें भरीं। कुछ के नीले होंठ निकल आये। मुन्नू और शशि खेल में धीरे-धीरे बातें करते रहे, क्योंकि शशि मंच पर आ गई थी।

परमेश्वर ने कमला, मुन्नू और वृद्धा की ओर इंगित करके, कहा : शहीद नीलकाँत ने यह परिवार छोड़ा है। ये हमारी बहिन हैं, यह हमारी माँ है। इनकी देखभाल का भार हमारे ऊपर है, आप सब पर हैं। यदि आप अपने कर्त्तव्य को अच्छी तरह समझ कर निबाह सकेंगे तो उस वीर की आत्मा स्वर्ग में भी प्रसन्न हो उठेगी। मैं आप सब लोगों से अनुरोध करता हूँ कि जिसकी भी जितनी शक्ति हो वह उतना ही देकर शहीद के परिवार की सहायता करे और याद रखे कि लोहू की कीमत वह नहीं चुका रहा है, वह यह समझ ले कि वह अपना धर्म निबाह रहा है, क्योंकि यह हमारी बहन हैं, हमारी माँ है !

परमेश्वर के बैठते ही तालियों के बीच एक व्यक्ति मंच पर पैदा हो गया। वह बुड्ढा था। नगर का एक प्रतिष्ठित व्यक्ति। उसने पहले अपने निहायत उबा देने वाले स्वर में देर तक शहीद को श्रृद्धांजलि अर्पित की, जिसे सुनकर भीड़ को लगा कि वह हर सभा में वक्त के पेड़ को जड़ से काट देने वाले कुल्हाड़े की जगह रखा गया था। तदुपरान्त वह नीलकांत के संस्मरण सुनाने लगा, जिसे सुनकर साफ़ प्रगट होता था कि उसकी नीलकांत से बहुत ही कम जान-पहचान थी। परन्तु वह धनी व्यक्ति था, इसीलिये इस समय उसे बोलने का अवसर दिया गया था। और वह भी 'मामूलीपन' के चारों ओर फैले काँटों पर शहीद के नाम का जूता पहन कर चढ़ गया था, नाम पैदा करने के लिये। कभी वह लम्बी आह लेता, कभी आँखों पर रुमाल फेरता, और दर्द से उसका

स्वर बैठ जाता। वृद्धा उस सबको देखकर भी ऐसे बैठी थी जैसे कुछ दीख नहीं रहा था। कमला की आँखें बार-बार गीली हो आती थीं जिसे देखकर भीड़ में कभी-कभी स्त्रियाँ कानाफूसी कर लेतीं : अब इस भीड़ में रोने की ऐसी क्या जरूरत है ! हम जानते हैं, सब जानते हैं, कि ये दुखी हैं !'

किसी ने कहा : ऐ बहिन ! स्त्री होके क्या चलित्तर की बात तुम न जानोगी, जैसे तुमने तो कभी किये नहीं। कँगन के पीछे तो तुम ही लड़ीं थीं अपने घरवालों से ! आँसू जित्ते बहेंगे, उत्ते ही रुपये मिलेंगे।'

'अरे रहने दो,' तीसरा स्वर फुसफुसाया—'किसी की बिपता को भी समझा करो भाइली !'

अभी भीड़ सोच ही रही थी कि यह जो एक बूढ़ा इतने सारे आदमियों को कोसता रहा था, इसका अन्त कैसे हो, कि बूढ़े ने वह वार मारा कि सारी भीड़ की आह हूर का लपेटा बन गई। वृद्धा ने कहा : और मैं, वैसे तो किसी लायक नहीं, पर भगवान ने जो दाल रोटी दी है, उसमें से हिस्सा करके, यह समझ कर कि शहीद के घर के लोग अब मेरे घर के हैं, क्योंकि शहीद तो सबका है, हम तो इस लायक भी नहीं कि उसके चरण छू सकें, अजी उसकी चरण रज भी ले सकें, मन्त्री जी से प्रार्थना करता हूँ कि बिसका नाम, वे नाम से ५००) लिख लें।

लोग ऐसे चकित रह गये जैसे जादूगर ने खाली डलिया में हाथ डालकर खरगोश निकाल कर दिखा दिया।

एक फुसफुसाया : साले ने बड़ा कमाया है। सूदखोर है।

पर जूता तो जोरदार होता है चाँदी का। दूसरा बोला : देने का दिल है साहब !

तीसरा स्वर : अजी सा'ब ! हम तो पहले ही कहते थे कि जब यह उठा है तो कुछ कर दिखायेगा···

उसके उबाने वाले स्वर ने जो बुड्ढे को लाश सा बना कर भीड़ के सामने घिन पैदा करदी थी, अब उसमें से ऐसी दिव्य ज्योति निकलने लगी जैसे शिशुपाल-वध के बाद निकली बताई जाती है जो कृष्ण में समा गई थी। यहाँ वह भीड़ में समा गई।

और इंसानों में उस तबके के लोग जो यह दावा करते हैं कि हम तो पहले ही कहते थे, ऐसे चतुर सुजान अब सिर हिलाने लगे। और बूढा उन्हें देख रहा था जैसे—बेटा ! अभी खेलो !

वृद्धा को मन ही मन आश्चर्य हुआ। इस बूढे का नाम वह जानती थी। पर गांधी महात्मा का जादू था कि पत्थर कहने लगे थे, बाबा ! तुम्हारे नाम की धारी जहाँ-जहाँ पड़ गई है, वहाँ वही गुलाब मिलेगा, ले जाना देश के लिये। वैयक्तिक निर्बलताओं में भी चेतना का उदय हो रहा था। अजीब ज़माना था कि एक जुल्म की बदबू दूसरे जुल्म को आने लगी थी। तब वृद्धा को लगा कि नीलकांत किसी 'महत्' के पीछे पागल था, उसने किसी 'बड़े काम' के लिये अपने को लगाया था। और जब परमेश्वर के मुँह से आवाज़ निकली—५००) रुपये, वृद्धा का मन बहुत पिघल गया।

कमला ने देखा और एक-एक कर लोग मंच पर आने

लगे। वहाँ चढ़कर खड़े होने में गौरव था। इस दुनिया का क़ायदा है कि अगर कहीं ऊँची जगह हो और उस पर चढ़-कर इंसान औरों को दिखाई देने लगे, तो हर इंसान की हविस होती है कि उस पर चढ़ जाये, सबके सामने अपने को प्रगट कर दे। इस मंच पर चढ़ने की महानता के पीछे लघुता की कितनी कुरूपता छिपी है, इसे बड़े-बड़े विद्वान भी समय पर भूलकर उसी जाल में फँस जाते हैं। विनम्रता आवश्यक होते हुए भी छल है, पर अच्छी है, उद्दण्डता पशुत्व है जो, छल को पाप बना देती है।

शहीद के फोटो के नीचे मां, बहू, बहन और बेटा, ऐसे बैठे थे जैसे किसी विशाल वृक्ष के नीचे चार लावारिस पत्थर रखे हों। यों यशः प्रार्थी अपना नाम लिखाने लगे। और ऐसे भी आये जिन्होंने अपने दान को गुप्त रखकर सीधे स्वर्ग में धर्म नाम कमाने को परमेश्वर से ज़िद की कि उनका नाम प्रगट न किया जाये, क्योंकि वे किसी पर अहसान नहीं कर रहे थे, और भीड़ में चर्चा यों चली कि महावीर प्रसाद कैसा भला आदमी है कि उसने दान भी दिया, मगर अपना नाम तक प्रकट नहीं किया ! अजी किसकी महावीर प्रसाद की कहते हो !' 'मैं जानता हूँ, उसने बहुतों को दान दिया, मगर नाम कभी प्रगट नहीं किया !' 'कौन नहीं जानता कि वह बड़ा गुप्त दानी है।'

नीलिमा की आँखों में अब एक गम्भीरता थी, चिंतन था। कमला की आँखों में गंभीर चमक थी। पैसा तीरंदाज मन की आँख को बेधता है।

मुहब्बत का मयार—पैसा !
धरम की जड़—पैसा !
पैसा यानी शहादत का मोल !
पैसा नहीं, झूठ की शराफ़त !

कमला अपने पति के फोटो को देखती ही बैठी, सुधियों में खोगई थी। नीलिमा को विश्वास नहीं हो रहा था कि पैसा यों भी आता है ! उसका पति क्लर्क था। पैसा दाँत से पकड़ता था। तरस-तरस कर रह जाती थी, मगर मन की उसकी मन में ही रह जाती थी !

तब शहीद की फ़ोटो पर फूल चढ़ने लगे।

उस समय वृद्धा हठात् रोने लगी और कमला भी। नीलिमा को भाई याद आ गया और सब को रोते देख मुन्नू भी रोने लगा, जिसे शशि मनाने के लिये रोने लगी।

आँसू ने घृणाओं को धोया। आशा की प्याली होठों से लग रही थी, क्योंकि पति की अमरता विभोर आनन्द और विसर्जन का षडयन्त्र बन गई थी।

कमला केवल उस करुणा और सहानुभूति को देख रही थी, जो इतना अर्पण व्याप्त कर रही थी। उसका ध्यान टूटा। परमेश्वर कह रहा था—भाइयो और बहनों ! आप लोगों ने जो अपनी सहानुभूति, देश-प्रेम और कर्त्तव्य-पथ पर अविचलित रहने का परिचय दिया है, उससे हमारा माथा गर्व से ऊँचा उठता है। मैं आप सबको हृदय से धन्यवाद देता हूँ। कुल १९२०) इकट्ठे हुए हैं, जिनमें से मुझे

१२००) मिल चुके हैं और ७२०) लिखित हैं । इसमें कई दान तो रुपये से कम के हैं। उनका तो देश के लिए बहुत बड़ा मूल्य है। मै सेठ मनोहरदास जी को कैसे धन्यवाद दूँ जिन्होंने इकट्ठे ५००) देकर नगर का नाम ऊँचा कर दिया है। मैं अब यह जमा रकम शहीद नीलकाँत के घर के लोगों को आपके सामने ही दिये देता हूँ। बाकी रकम इकट्ठी करके उनके घर पहुँचा दूँगा। आइये माता जी…

माता उठी। परमेश्वर ने रुपयों की थैली देदी । वृद्धा स्तब्ध खड़ी रही। नीलिमा ने कहा : अम्मा बैठ जाओ।

वृद्धा वहीं बैठ गई, फिर सरक कर अपनी जगह आ गई। आज तक उसने राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं को 'फुलकादास' 'रबड़ीदास' कहा था। आज वे भारतमाता के पुत्र दीख रहे थे। कल के नास्तिक रुपयों के पुल पर खड़े होकर भगवान के चेले बन गये थे। लोहे की कढ़ाई में से किनारे चिपकी मलाई को खुरचने वाले पलटे से घर की मालकिन को तभी स्नेह होता है जब किसी दुधारु गैया के थन कढ़ाई के लिए चुचाने लगते हैं। इस समय वह गद्‌गद हो गई थी। जीवन के रहे सहे दिनों का आधार था मुन्नू, और मुन्नू का आधार था रुपया। और रुपये के पेड़ में ममता का फल लगता था। मन से आशीष दे रही थी। परमेश्वर तो उद्धव हो गया था। सुरेश जी अक्रूरजी बन गये थे । अक्रूरजी आँखों को झुकाये बैठे थे। वृद्धा क्षण भर को अपनी व्यथा भूल गई । कभी जिन्दगी में इतने रुपये आते न दीखे थे। इसी नीलिमा के लिए

ले दे के जो छोटा मकान था ब्याह पर बिक गया था, तब तो इसका सुहाग खड़ा हुआ था । बहूरानी कमला तो पापड़ बेलने की जात आई ।

दो मिनट की शांति रखी गई, क्योंकि अमूमन दूसरे की मौत पर इंसान एक मिनट भी चुप नहीं रहता । और वह तो दो मिनट कहे जाते है, पर उसे भी आधा ही मिनट निबाहा जाता है ।

जब सब ही की आत्मा को शान्ति मिल गई और यह भी मान लिया गया कि अब स्वर्गीय नीलकान्त की आत्मा को भी शान्ति मिल चुकी है, तब कोई काम बाकी नहीं रहा ।

कमला ने पति के फोटो के पास पड़े फ़ूलों को आँचल की झोली में भर लिया । इस आँचल की गाँठ दे के वह लाया था, इसमें गोद भरी थी, और आज दुनिया के आँसू जब फूल बन गए थे, तब वह सुधियों की मारी उन्हें ही समेट ले चली थी । यह फूल शायद उसे, सूख कर भी, ख़ुशबू देंगे, जैसे देवता पर चढ़े फ़ूलों को पुजारी नाली में नहीं फेंकता, कहीं आले में इकट्ठे करके रख देता है । मन ने पुकारा देवता ! जहाँ भी हो; वहीं से मुझे देखना । हतभागिनी हूँ । मेरी रक्षा करना । अपने पुत्र को न भूल जाना ।

जिस तरह हर प्रार्थना पर मूर्त्ति नहीं बोलती, स्वयं मन बोलता है कि हाँ पूरी हो जाएगी, उसी तरह कमला का भी हुआ । और उसकी आँखें कुछ मुंद सी गईं ।

वृद्धा ने उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा : बहू ! अब चलें।

कमला ने देखा। नीलिमा के नयनों में कुछ अतृप्त सा था। और सचमुच वह सोच रही थी। सुहाग का मोल आज अधिक रहा कि वैधव्य का ?

शीला अपने पति और पुत्री के साथ चली गई थी। मुन्नू भी उनके सँग ही चला गया था।

अत्यन्त प्रसन्न था परमेश्वर। उसने आकर कहा : अब चलिये। अब यहाँ क्या है ?

उसने सहज कहा, पर कमला को लगा वह उनकी गरीबी पर व्यंग्य था। उसने कहा : हाँ चलिये भैया !

पर वह और कुछ भी नहीं कह सकी।

परमेश्वर की आँखें नीलिमा की आँखों से टकराईं। नीलिमा के नेत्रों में परमेश्वर को लगा, विक्षोभ था, और थी कुछ घृणा। वह समझ नहीं सका।

माँ ने १२००) रुपयों वाला हाथ अपनी धोती में भीतर कर लिया…वह उसके हो गये…

आँखों के आँसू सूख गये। जीवन के यथार्थ के नीचे अभाव अपनी परवशता लिये ऊँघने लगा। भाग्य अपनी सीमाओं के साथ पर फैला कर चेतनाओं में समा गया। नीलकांत नहीं रहा, परन्तु परंपरा के रूप में उसकी एक फीकी याद बची रह गई।

आज उसके पौन महीने का 'सराध' था। सभी को रह रह कर उसकी याद आरही थी। कमला श्राद्ध के लिये पकवान बना रही थी, लेकिन उसकी आँखें हृदय से एक तार होकर रसोई की दीवारों को भेद कर घर के एक एक कोने में पति का ही चित्र देख रही थीं। हर पल मानों कह रहा था···एक दिन था···एक दिन था।

पति की एक क्षण की मौत, स्त्री के लिये बाकी जीवन के हर क्षण की मौत हो जाती है। रफ्ता रफ्ता बिना हमदर्दी के हलाल होकर मरना ही वैधव्य है।

कितनी सुखद घड़ियाँ एक साथ उसमें समा गई थीं जब उसके पति ने होठों पर मीठी मुस्कान लेकर धीमे से कहा था: कमला ! घबराना मत ! मैं चार पाँच दिन में ही लौट आऊँगा। और आज कितने दिन हो गये थे। कढ़ाई में घी खौलने लगा था। फिर याद आया—मुन्नू और अम्मा का

ध्यान रखना। तब कमला ने अपार सुख और संतोष अपनी आँखों में लेकर कहा: जल्दी आजाना और उसने भगवान से मूक प्रार्थना की थी···

परन्तु समय का कगारा परिवर्त्तन की धारा में बह गया।

रसोई का धुँआ आँखों में आँसू भर भर लाया।

दोपहर को पंडित जी भोजन करने आये। उन्होंने कहा: वाह ! क्या पकवान बने हैं, मुन्नू की दादी ! पर जरा अगर खीर में थोड़ा मीठा और होता तो कमाल हो जाता।

नीलू की माँ ने बूरा डाला, क्योंकि उसकी राय में पंडितजी नहीं खा रहे थे, वे तो पुत्र रूपी हौज़ तक भोजन पहुँचाने वाली नाली के समान थे। पंडितजी ने दक्षिणा ली और मुन्नू को 'चिरंजीव रहो !' का आशीर्वाद दिया। और कहा: बहू! देखो ! नेम से शाम को शिवालय में जाकर एक दीपक जला आया करो, तो जिस तरह दीपक की लौ अंधेरे का विनाश करती रहती है उसी तरह भगवान भोलानाथ तुम्हारे कष्टों का विनाश करेंगे।

पंडितजी बड़े 'पहुँचमान' माने जाते थे। उन्होंने प्रश्न-वाचक दृष्टि से नीलू की माँ को देखा। वृद्धा ने सिर हिलाकर कहा: ठीक है, चली जायेगी महाराज !

पंडितजी की आँखें चमक उठीं। बोले : दुख और संकट तो सबके लगे रहते हैं मुन्नू की दादी। पूर्वजन्म का भी तो कुछ चुकाना ही पड़ेगा न ? तब किसे सूझती है ? याद है

न ? गांधारी ने १०० बेटों की लाशें देखने को पट्टी खोली थी ! कौन अपना, कौन पराया, गिनी साँसों का खेल है । संस्कार जितने दिन थे, संग होगया । अब जाने किसके घर जनम लेकर उसने बाजे बजवाये होंगे । मुन्नू की दादी, जिंदगी है एक नाटक ! अब वहाँ सब दूधों नहाये, पूतों फले कहते होंगे ! और तुम आँसू बहा रही हो ! अरे माया है । मार्कण्डेय ऋषि को भगवान ने परलय का तमाशा दिखा दिया था।

पंडित जी ने हाथ टिकाया और उठते हुए कहा: हाँ । सुना है तुम्हारे यहाँ नीबू का बहुत पुराना अचार है, मुन्नू की दादी, देना तो एक टुकड़ा । पेट में दरद लग गया है । लड़के कहते हैं बायगोला है, बादी से होता है, कुछ गरिष्ट खाना खाजाने से, तुम्ही बताओ, बचपन से, जिस खाने से न हुआ कुछ, उससे क्या बुढ़ापे में होगा अब, अरे करमगति कोई नहीं देखता ! यह लोग बीमारी को खानपान का दोस समझते हैं...

पंडित जी ने अचार लाने को नीलिमा को आते देखकर संतोष से कहा: बड़ी विचित्र गति है जीवन की बेटी, अज्ञानी ठहरे हम, परमात्मा की लीला को क्या समझेंगे, जरा दो फाँक कागज़ में और लपेट देना, रात को खा लूँगा, एक सत्य-नारायण की कथा में और जाना है, वे भले लोग क्या बिना खिलाये छोड़ेंगे ? पुराना नीबू भी जादू की चीज़ समझो ! परमात्मा ने भी क्या क्या चीजें बनाई हैं । और उसका कौन पार पासकता है ? हम समझते हैं वह मर गया, पर वह कभी नहीं मरता, हम बेकार गला फाड़-फाड़ कर रोते हैं । मोह

जाल है और कुछ नहीं !

नीलिमा ने अचार दिया। पुड़िया भी लेली, वहीं बाकी खाकर कहा: यह मसाला बड़ा अच्छा है।'

वृद्धा ने करुणस्वर से कहा: 'यह अचार नीलू को बहुत पसंद था पंडित जी ! यह मोह-जाल क्या मरे बिना छुटेगा ?

नीलिमा ने आँखें फाड़ कर वेदना से देखा। कमला सिर झुकाये बैठी रही। वृद्धा कहती रही : कितने ही इन आँखों के सामने से पराए होकर चले गए, पर याद नहीं छूटी। अब कितनी समझाओ, पर न दिल मानता है, न आँसू रुकते हैं।

उसने एक लम्बी आह भरी और फिर जैसे चुक गई।

पंडित जी ने अचार की डकार छोड़कर कहा : अब तो इसी पौधे को सींचो, यही आगे चल कर फल देगा। यही तुम्हारे जीवन का सुख और संतोष है, नीलू की अमानत है, अब तो इसी पर छाती देकर बैठो, यही भवसागर से पार करा देगा।

मुन्नू अपना इतना महत्त्व सुनकर समझ नहीं सका। वह सबकी तरफ बारी बारी से देखता जाता था, परन्तु बोलने की उसकी हिम्मत नहीं पड़ रही थी।

पण्डित जी चले गये तो वह भी उदास सा खड़ा रह गया। कमला ने तुरन्त अपने आँसू पोंछ कर उसे अपनी गोद में बिठा लिया और पुचकार कर कहा : भूखा है मेरा बेटा ?

मुन्नू ने उदासी से दबी आवाज में कहा : नहीं।

फिर उसने भोली आँखें माँ की तरफ़ फिरा कर कहा: माँ। बाबू जी कहाँ चले गये? मैं उनके बिना आज खाना नहीं

खाऊँगा। खीर मैं उनके हाथ से ही खाता हूँ न ?

माँ के होंठ काँप उठे। वृद्धा ने कहा : बहू ! रो मत। वज्जर करले हिया। आ बेटा चलें। बजार चलेंगे।

वृद्धा बालक को बजार लेकर बहलाने चली गईं।

कमला कमरे में फूट फूट कर रोई।

पीड़ा की गाँठ भी रित रित कर पतली पड़ गई।

वृद्धा लौटी तो नीलिमा ने मुन्नू को गोद में ले लिया।

दिन की उदास घड़ियाँ बोझिल बनकर निकल गईं और, और भी अधिक बोझिल बन गई साँझ, जिसकी अँधेरी छत दीपकों की उजाली लौओं पर टिक गई, मगर जली नहीं।

कमला ने जाकर शिवालय में छोटा सा दीपक जला दिया और फिर आँखें मूँद कर भोलानाथ से मुन्नू के भविष्य के लिए प्रार्थना की। मनोतियाँ माँगी। जब वापिस आई तो देखा शीला आई थी। नीलिमा से बातें कर रही थी। मुन्नू शीला की गोद में बैठा कह रहा था : 'ताई जी ! ताई जी ! मुझे अपने घर कब ले चलोगी ?'

शीला ने कहा : 'तेरी माँ आजाये जरा, तब ले चलूँगी !'

'माँ आयेगी तो ले चलोगी ?'

'हाँ।'

'वहाँ रेल मोटर का खेल दिखाओगी ?'

'जरूर !'

कमला ने शीला को नमस्ते किया और बैठते हुए कहा : अब रात को कहाँ जायेगा बेटा ! सबेरे चला जइयो !

नहीं मां ! मैं तो अभी जाऊँगा । मैं वहाँ रेल मोटर का खेल देखूँगा । मालूम है रेल कैसे दौड़ती है, ऐसे सर्र, सर्र...

उसने अँगुली भी घुमाई, फिर कहा : तुम भी चलो न माँ ?

सबेरे चलेंगे बेटा ! अब खाना नहीं खायेगा तू ? मैं तुझे आज बड़ी अच्छी कहानी सुनाऊँगी ? सुनेगा न ?

नहीं, मैं तो अभी जाऊँगा...

नहीं । अब कहाँ जायेगा इस बखत । चुप रह....

मुन्नू सहम गया पर उसने हठ न छोड़ा ।

'जाने भी दो न बहन,' शीला ने कहा । सबेरे आजायेगा । कोई पराये घर थोड़े ही जा रहा है ?

कमला विवश हो गई । मुन्नू ताई जी से चिपट कर हँस पड़ा ।

'जिद्द का बड़ा पक्का है तू !' कमला ने डाँटा । 'बहन ! थोड़ी देर में ही इसे छोड़ जाना वर्ना आदत बिगड़ेगी ।'

'बच्चा भी तो है बहन ।' शीला ने बचाव किया ।

थोड़ी देर बीती थी कि मुन्नू ने शुरू किया, चलो न ताई जी! शीला मुसकुराकर उठी और मुन्नू को लेकर चलने लगी । द्वार पर कमला से कहा : 'बच्चा तो वहीं जाता है बहन, जहाँ उसे प्यार मिलता है । बच्चा नकली और बनावटी प्यार को खूब समझता है !'

शीला तो चली गई पर नीलिमा ने भौंह तरेर कर कहा : बड़ी प्यार वाली पड़ोसिन है भाभी ! तुमने भी बच्चा इस बखत पराये घर भेज दिया ? किसी का क्या भरोसा ? औरतों

के हज़ार लफड़े होवें । टोना करदें क्या ठीक है ?

कमला का मन विक्षुब्ध हो गया। उसने सिर झुकाकर धीरे से कहा : बीवी शीला तो बड़ी सीधी है।

'तुम्हारा लड़का भाभी, कहीं भेजो। मुझे यहाँ कितने दिन रहना है। मैंने तो एक बात कही है। तुम तो ऐसा बुरा मानती हो, जैसे मैंने कोई गाली देदी ! मैंने कुछ भी तो नहीं कहा ! वह तुम्हारी बड़ी बहन, तुम उसकी छोटी। मुझे तुमसे जलन है कुछ, जो बुरी कहूँगी ?'

बात कहीं से कहीं चली गई : कमला मन-ही-मन सकपका गई। उसने दबे स्वर से कहा : क्या कहती हैं बीबी ! अरे, तुम कैसे पराई हो गईं। मेरी तो क्या वे, होते, तो वे भी तुम्हारी बातें चार-चार आठ सुनते बीबी !

नीलिमा भीतर चली गई।

परन्तु कमला का मन छटपटाने लगा। क्या किसी पर विश्वास भी नहीं किया जा सकता ? कौन है और अब हमारा ?

सबालों की लड़ी बँधी और झनझना उठी। नीलिमा ने लौटकर कहा : भाभी, अभी तो तुम अनजान हो। जब कुछ समझोगी तब जानोगी मैं क्या कहती थी। न जाने किसका कैसा साया पल्ला ! तुम्हें कुछ पता भी है ? प्यार माना, पर समझ भी तो होनी चाहिये। एक दिन, अम्मा कहती हैं, बचपन में नीलू भैया खेलते बाहर निकल गये थे। न जाने कौन डायन नज़र भर के देख गई कि ऐसे रोते आये कि महीने भर खाट पर पड़े रहे। अन्न का मुँह में एक दाना नहीं गया !

कमला को दुराशंका का झोंका लगा। वह आगे नहीं सुन पाई। यह कल्पना भी उसके लिये असह्य थी। उस स्वर में घृणा का साँप ज़हर उगल रहा था।

अच्छा बीबीजी, मैं उसे अभी ले आती हूँ।

परन्तु अब चलने पर उसे संकोच सताने लगा। क्या कहेगी वह जाकर? क्या यह शीला पर अविश्वास प्रगट करना न होगा? प्रेम और माधुर्य्य की रिक्ति ही तो उसकी सत्ता थी। शीला और उसका पति आधी रात काम आते थे।

घर पहुँच कर उसने पुकारा : मुन्नू!

मुन्नू आवाज़ पहँचान कर चिल्ला उठा : आ जाओ माँ। जल्दी आओ। एक रसगुल्ला मैं तुम्हें भी दूँगा।

कमला ने ऊपर जाकर देखा। मुन्नू शशि के साथ बैठा मिठाई खा रहा था। माँ को देखते ही उसने हाथ पकड़कर कहा : अम्मा! मैं तुझे भी रसगुला खिलाऊँगा। बड़ा मीठा है!

कमला हँस पड़ी।

शीला ने कहा : आओ बैठो!

पर उसका मन भीतर ही कचोट खा गया। उसने अनुभव किया कि उसकी भूल थी कि पराये बच्चे को ऐसा अपना समझ बैठी थी। शिष्टता के नाते कहा : ऊधम करती है शशि, मुन्नू समझाता है।

कमला ने कहा : नहीं बहन! बड़ा नटखट है। न जाने क्या करेगा बड़ा होकर! अब तो बहन! मैं सोचती हूँ इसे एक दो दिन में पाठशाला में पढ़ने बिठाऊँगी तब इसके ये

ऊधम कम होंगे। वे तो इसे किसी अच्छे मदरसे में भेजना चाहते थे, पर अब तो जो हो जाये, वही बहुत हैं। तुम सबकी परबरस होगी तो पल ही जायेगा।

शीला का मैल धुला।

'क्या कहती हो बहन !' शीला ने उसका हाथ पकड़ कर कहा : मेरी शशि और मुन्नू में क्या कुछ फरक है। पढ़ने बिठा दो। शशि के पिताजी उसी स्कूल में भर्ती करा देंगे इसे। बच्चे का बच्चे से दिल लगता है।'

'माँजी से पूछूँगी।'

अब शीला को याद आया। कमला के ऊपर भी कोई थी। उसकी ग्लानि धुल गई।

कमला ने मुन्नू का हाथ पकड़ कर कहा : अच्छा चलूँ बहन। माताजी मन्दिर से आ गई होंगीं। बीबी घर में इकली हैं।

घर आते ही वृद्धा ने लापरवाही सी में कहा : बहू, कहाँ चली गई थी ! ऐसे बखत आना जाना क्या ठीक है घर के बाहर ! दियाबले, घर में भले, यही बहू बेटियों का धरम है।

कमला का मन जैसे भीतर ही भीतर मसल गया।

वृद्धा ने पुत्री से सुन लिया था। कहा: न भेजती, न जाना पड़ता। खाना तैयार है !

'माताजी रोटी बेलनी है।'

'तो चौका आधीरात तक उठ जायेगा न ?'

'चली गई थी न मुन्नू को लेने।'

वृद्धा ने धीरे से कहा : 'राम की मरजी।'

कमला क्या कहती ?

नीलिमा ने कहा : चल मुन्नू ऊपर चलें। अम्मा चलो।

मुन्नू ने माँ की ओर देखकर कहा : माँ। तू नहीं चलेगी !

नीलिमा ने कहा : हाय रे कलजुग ! हमें पराया समझता है अभी से। अरे बच्चे का मन तो दरपन है। जैसा चाहो अक्स ले लो।

फिर फटकार कर कहा : 'चल ऊपर !'

'नहीं, मैं नहीं जाऊँगा।'

'जिद्दी !' नीलिमा ने फटकारा।

'जा बेटा !' कमला ने कहा : 'जा ऊपर ! बुआ कहती है न ?'

'अब रहने दो भाभी ! बुआ न होती, पड़ोसिन होती तो अच्छा था।' कहकर नीलिमा ऊपर चली गई।

वृद्धा के चले जाने पर कमला की इच्छा हुई कसकर मुन्नू को दो चांटे मारदे, पर उस अभागे ने कहा : माँ ! बुआ को बड़ा गुस्सा आता है न ? मुझे डराती है। बाबूजी कहते थे किसी से डरना नहीं चाहिये।

कमला रुक गई। उसने चकला बेलन सँभाला। मुन्नू एक पट्टे पर बैठ गया। घुटनों को हाथों में बाँधकर उस पर ठोड़ी टिकाये टुकुर-टुकुर गंभीर सा देखता रहा। माँ ने चूल्हे में फूँकनी से फूँका। लपट उठी और लकड़ी सुलग उठी।

× × ×

नीलिमा ने धीरे से कहा : अम्मा !

'क्या है बेटी ! वृद्धा ने लेटे-लेटे कहा ।

'एक बात कहूँ ?'

'कह न ?'

नीलिमा चुप रही ।

'क्यों चुप क्यों है ?'

'सोचती हूँ, पराई हूँ, बोलूँ या न बोलूँ ।'

'तू पराई कैसे हो गई बेटी ?'

'अरे तुम समझती हो, तो क्या भाभी भी यही समझेंगी ?'

वृद्धा ने कहा : 'कुछ बात हुई ?'

नहीं, सो मैं चार दिन की मेहमान, किसी को कुछ कहने का मौका ही क्यों देने लगी ? आप चुप तो जमाने के भले ।

'तू कह तो सही ।'

'कहूँगी । पर तुम हुई बूढ़ी । जवान बेटे के गम की सताई! पर नाती तो है न ? कुछ ध्यान भी है ?'

'क्यों क्यों ?' वृद्धा चौंकी ।

'अरे कहती हूँ, कि वह परमेश्वर लाकर सारी रकम दे गया है सो पूरे १६०० रुपये हैं । दुनिया जानती है घर में मरद के नाम पर वही एक चूहा है मुन्नू ! इतनी बड़ी रकम घर में रखी है सो कम जोखम है । भाभी की उमर की क्या कम जोखम है अम्मा ! जो दूसरी भी बाँधे बैठी हो !'

'तू ठीक कहती है ।' वृद्धा ने कहा : 'मैं सोचती थी बौहरे रामसेवक के घर दूँ, ब्याज देता रहेगा, हमारा भी काम चलता रहेगा । राँड़ बेवाओं का बड़ा सहारा है बिचारा वह । अधन्नी रुपया लेता है । आधा उसका काम

देखने का, आधा धनी का। रुपये तो समझो घर में रखे हैं।'

'अब तुम्हारी मर्जी।' नीलिमा ने लंबी साँस भर कर कहा।

'तो तू क्या कहती है।'

'कहती हूँ डकार गया तो। यह बौहरे मुनीम बड़े जालिम होते हैं। नया जमाना है। सरकार ने बंक खोली है, उसी में धरो, तो ब्याज का आधार भी न खायेगा कोई, और डर भी न रहेगा।'

'पर बेटी, सरकारी मामलों में मेरी समझ नहीं, तू बहू की राय ले।'

'बहू की राय लूँगी मैं कि तुम? मुझे क्या पड़ी? में तो कहती हूँ रुपयों को संभालना मर्दों का काम है। तुम कहो तो सलाह मसबरा करके उन्हें चिट्ठी लिख के बुलालूँ। लिखूँगी, उस नौकरी को आग लगा के आजाओ, जो आज तक साले के एक दिन काम न आये। अब तो मुँह की कालख धोलो।

वृद्धा को उजाला सा दिखा। कहा: 'बेटी! लाला ने मुँह फेर लिया तो मैं करती भी क्या? अब तू कहती है कि वे आजायेंगे तो मेरा और कौन है सहारा? एक यह अनाथ बच्चा है! इसी दिन के लिए दुनिया में नाते-रिश्तेदारी बनाई जाती हैं! कल ही चिट्ठी लिख दे!'

नीलिमा भी कुछ है, इस गर्व ने उसे सन्तोष दिया।

खाना खाते वक्त नीलिमा ने कहा: अम्मा! तुम तो

इतना जोर देती हो, भाभी से भी तो पूछ लो !

पूछले ।' वृद्धा ने सहज स्वर से कहा : 'लाला आकर 'क में रुपये जमा करादें मुन्नू के नाम, इस काम को क्या बहू बुरा कहेगी । अरे वहू क्या अँग्रेजी पढ़ी है जो यह ही कर लेगी ? जमाना ठीक नहीं है । कौन किसका बनता है ? गलत कहती हूँ बहू ?'

कमला ने कहा : नन्देऊजी आजायें तो ठीक है । शीला बहन ने भी यही कहा था । मैंने कहा था : शशि के बाबूजी माताजी को ताँगे में बिठा के ले जायें और यहीं करादें, तो बोली : न बाबा ! पैसों का मामला है । पूछकर उनसे जबाव ले लूँ, तब कहूँगी । पर नन्देऊजी को फुरसत कहाँ मिलती है । करम तक में आने को छुट्टी न मिल सकी ? कैसे आयेंगे वे ?

नीलिमा भीतर ही भीतर जल उठी । कुछ बोली नहीं ।

वृद्धा ने कहा : ठीक कहती है बहू ! पर आखिर लाला घर के हैं, शीला के आदमी की बुराई मैं नहीं करती ! हम औरतों की जात ! जो बंक वाला मुकर गया तो क्या कर लेंगी हम लोग । कोई लड़ने वाला भी तो चाहिये ? दुनिया में बड़ी-बड़ी पोलें हैं बहू । तूने अभी देखा ही क्या है । तू लिखदे बेटी !

'भाभी से पक्की पूछ लो', नीलिमा ने कहा—'यहीं काम हो जाये तो उन्हें क्यों तकलीफ़ दी जाये ।'

कमला ने व्यंग्य समझा । कहा : बीबी ! छुट्टी मिल

जाये तो उनसे बढ़कर कौन होगा। जरूर लिखदो।

नीलिमा ने देखा और अपने बाँये हाथ से अपनी रोटी पर घी के चम्मच को दो बार उलट कर इधर-उधर देखकर फिर तीसरी बार उलट दिया···

कमला ने माथे का पसीना पोंछा और कहा : अरे मुन्नू पट्टे पर ही सो गया ! अब इसे जगाना तो मुसीबत हो गई···

मुन्नू सचमुच सो गया था।

वृद्धा ने कहा : जगादे बहू···भूखा सो जायेगा···

'नहीं माताजी।' कमला ने कहा—'सो तो शीला वहन के खूब रसगुल्ले खाकर आया है।'

वह हँसी।

नीलिमा के गले में रोटी का कौर अटक गया।

दोनों तरफ़ का ख़याल : चूल्हे की वफ़ा

नीलिमा माँ के पास बैठी थी। कमला भी चाय ले आई। मुन्नू खड़ा होकर कमला की पीठ पर झूलने लगा। कमला ने उसका हाथ पकड़ कर उसे गोद में बिठा कर कहा : अब काफ़ी बड़ा हो गया है माताजी! अब तो आप इसे किसी स्कूल में भरती करा दीजिये। घर पर जितने में शैतानी करता है, उतने में कुछ पढ़े लिखेगा ही।

फिर साँस लेकर कहा : मैं तो सोचती हूँ कि जिस स्कूल में शशि पढ़ती है वहीं इसे बिठादें। दोनों साथ-साथ पढ़ आया करेंगे। उसके बाबूजी उसे लेने पहुँचाने जाते ही हैं, यह भी उन्हीं के साथ आ जाया करेगा!

वृद्धा ने कहा : ठीक कहती है बहू!

और मुस्कराकर मुन्नू से पूछा : पढ़ने जायेगा न?

मुन्नू ने बड़े नखरे से कहा : शशि जायेगी तो मैं भी जाऊँगा।

नीलिमा ने कहा : अरे वहाँ ये नखरे कौन सहेगा तेरे? ज़िद करी तो वह मार पड़ेगी कि हाँ। याद रखियो!

वृद्धा ने बात बदल कर कहा : पूजा का सामान ठीक करके बहू कमरा धो देना।

'अच्छी बात है।' कमला ने कहा।

तो भी नीलिमा ने सरकाया: भाभी नीचे का आँगन भी।

कमला ने सिर हिलाकर स्वीकार किया।

चाय पीने पर कमला बर्तन लेकर चली गईं।

किसी ने दरवाज़ा खटखटाया।

नीलिमा ने कहा कौन ?

'मैं हूँ।' स्वर आया।

'मैं कौन ?'

'परमेश्वर !'

'खोलदे बेटी दरवाज़ा', वृद्धा ने कहा।

परमेश्वर ने नमस्ते किया और वृद्धा के कहने से बैठ गया।

'अच्छे तो हो बेटा।'

'हाँ माताजी। दया है।'

'कैसे याद आई इन अभागिनों की ?'

परमेश्वर ने कहा : 'भाभी नहीं हैं ?'

नीलिमा ने कहा : हैं तो ! कोई काम हो तो बुलादूँ ?'

परमेश्वर झिझक गया। कहा 'हाँ काम तो आप सबसे ही है।'

'क्या ?' नीलिमा ने पूछा।

परमेश्वर ने कहा : हमने नगर में एक स्त्री-संघ खोलने का विचार किया है ताकि स्त्रियाँ हर क्षेत्र में विकास कर सकें। उसमें चंदा भी किया जायेगा ताकि मुसीबत में पड़ी बहनों की मदद की जा सके। आगे चलकर संघ की तरफ से एक विद्यालय खोलने का भी विचार है जिसमें खाली समय में

अशिक्षित बहिनें शिक्षा प्राप्त कर सकें। वहाँ घरेलू उद्योग-धन्धे सिखाने पर भी जोर दिया जायेगा, और जो माल बहिनें तैयार करेंगी, उसकी बिक्री में मुनाफे का एक हिस्सा उन्हें भी दिया जायेगा। हमारा विचार तो ऐसी सहकारिता स्थापित करनी है कि कुछ कर्ज भी दिये जा सकें। इससे राजनीतिक चेतना जायेगी और समाज में जागरण आ सकेगा। राष्ट्र-निर्माण का नया आंदोलन चलेगा। स्त्रियों को भी स्वतन्त्रता प्राप्त होगी।

परमेश्वर नहीं जानता था कि कमला जाने कबसे आकर पीछे की तरफ़ चुपचाप बैठी सब सुन रही थी। उसने अन्त में कहा : क्यों माताजी ! हमारा विचार अच्छा है न ?

वृद्धा को सब-कुछ नया सा लगा। कुछ समझ में आया, कुछ नहीं। कुछ क्षण वह चुप बैठी रही, और फिर कुछ निर्बल स्वर से बोली : भैया ! तुम जाने क्या-क्या कहते हो ! पर स्त्रियाँ पढ़ लिखकर ही क्या निहाल करती हैं ?

नीलिमा ने कहा : अजी फिर तो मेम बनें मेम ! मैंने तो अम्मा शहर में सैकड़ों देखी हैं। चलन नहीं, सील नहीं। फिर तो मर्दों में बैठाया जावे उन्हें हमेशा। औरतें काहे को अच्छी लगें ? पढ़ाई का क्या फायदा भइया !

परमेश्वर ने काटा, बहन ! पर अँगरेजी चाल पर जाती हैं वे औरतें जिनके मर्द उस चाल पर चलते है। हम विदेशी शिक्षा नहीं देंगे। हम तो देश के प्रति उनका उत्तरदायित्व जगायेंगे।

'अरे भइया !' नीलिमा ने तमक कर कहा : 'पढ़ लिखकर तो धरती पर पाँव न पड़ेगा फिर ? देश के लिये तो मर्द ही बहुत हैं। भैया ही चले गये इस राह में, और किसे झोंक दें अब ?

परमेश्वर हतप्रभ हो गया।

वृद्धा ने धीरे से कहा : 'नहीं बेटी, पढ़कर तो आदमी समर्थ बन जाता है। तेरे पिता ने तुझे घर पर पढ़ाने की कितनी कोशिश की, पर तेरा तो मन न लगा। वे कहते थे पुराने जमाने में स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी होती थीं।

परमेश्वर में जान लौटी।

माँ ने फिर कहा : 'मैं सदा तो नहीं रहूँगी भैया ! तुमने हमारी मुसीबत देखकर रुपया किया, तुम जो करोगे, वह हमारे नुकसान के लिये नहीं होगा। स्त्री के लिये पति का न होना कितना बड़ा कष्ट है यह क्या मैं नहीं जानती ? गरीब का कोई नहीं, फिर औरत का कोई होगा कब ? बहुत सी भले घर की बहुओं को मैंने बच्चे पालने को दर-दर भीख माँगते देखा है !

वृद्धा का जैसे रोम-रोम सिहर उठा।

नीलिमा ऐसे बैठी थी जैसे कौड़ी गलत पड़ी। उद्योग-धंधों का काम अच्छा है, परमेश्वर भैया !' कमला ने कहा।

वह सोच रही थी कि वह भी तो एक वैसी ही स्त्री थी ! निराधार ! वृद्धा का क्या ! आज है, कल नहीं !

और छोटा सा दीपक था मुन्नू, कितना छोटा दायरा था आज उसके प्रकाश का, कितना बढ़ जायेगा वह !

क्या वह भी भीख माँगेगी !

नहीं ! नहीं !

सारी देह चिल्लाई : नहीं, नहीं ।

मृत्यु की एक घड़ी तक भी नहीं !

तब मुन्नू !

पमेरश्वर ने कहा : स्त्री-संघ कुरीतियों को रोकेगा। विधवाओं के लिये उससे बढ़कर क्या होगा ?

'कौन जानता है !' वृद्धा ने कहा : समय सबका सदा एकसा नहीं रहता। भविष्य एकदम काला होकर कमला के सामने नाच रहा था। उसकी आँखों में गहन चिंता छा गई।

परमेश्वर ने कहा : आज शाम को संघ की मीटिंग रखी है। उसमें आप सब आइये। मैं चाहता हूँ कमला बहन संघ की मन्त्री बनें। मन बँटेगा, काम सीखेंगी, और कांग्रेस मदद भी देगी कुछ। ज्यादा तो नहीं पर जो हो सकेगा।

उसने प्रश्न भरी मुद्रा में कमला को देखा। उसकी दृष्टि में अनुकम्पा थी। कमला का स्वाभिमान फिर विद्रोह कर उठा।

उसने कहा : नहीं भैया ! मैं पढ़ी न लिखी ! क्या काम सँभालूँगी भला ? मुझे घर के ही काम बहुत हैं !

परमेश्वर ने कहा : माताजी सँग आयेंगी ! आप डरती क्यों हैं ?

'मैं क्या जाऊँगी ?' वृद्धा ने कहा। 'नीलिमा को

भेजदूँगी ।'

'कौन मैं ?' नीलिमा ने पूछा :

'क्यों, क्या हरज है ? माँ ने पूछा ।

परमेश्वर ने कहा : '६ बजे तैयार रहियेगा ।'

वह चला गया ।

वृद्धा ने स्नेह से कहा : लड़का भला है । अरे कौन किसी को अकारन पूछता है !

नीलिमा ने धीरे से कहा : हाँ माँ ! अभी कोई कारन दीखा तो नहीं । घर गिरस्ती है ?'

'मुसीबत का मारा है, सब मर गये इसके भी । नीलू जैसा ही जैलों में रहा है यह ।'

अब नीलिमा विरोध न कर सकी ।

पर कहा : पीछे रहते हैं अम्मा ये लोग ! भैया को आगे भेजते में क्या इसे खतरा मालूम न था ?'

वृद्धा विक्षुब्ध हुई । कहा: किसी को क्या दोस दें बेटी । भाग्य को क्यों भूल जायेगी तू ?

'हूँ ।' नीलिमा ने घुटते स्वर से कहा । ऊपर चली गई ।

कमला ने कहा : माँ जी! नहा लें । पानी रखा है । वर्ना मंदिर जाने को देर हो जायेगी ।

कमला रसोई में चली गई ।

मुन्नू नीलिमा के पास जाकर पीठ पर चढ़ कर ऊधम करते हुए बोला: बुआ जी ! बुआ जी !

'क्या है ?' नीलमा ने रुखाई से पूछा ।

'तुम मेरे लिये एक भी गुड़िया नहीं लाईं ?'

नीलिमा चौंकी।'

'क्यों नहीं लाईं बुआजी !'

'हाँ' ऐसे में आई तो गुड़िया ही लाती ?'

'कैसे में आई हो ?'

'चुप रह तू ! बेकार बातें मत कर। जाते बखत लादूँगी।'

'तुम कब जाओगी बुआ जी।'

नीलिमा ने छज्जे पर निकल कर कहा: अच्छा ? बच्चा पूछता है—कब जाओगी !

पर उसकी बात कट गई, वृद्धा ने पुकारा: नीलिमा ! लाला को चिट्ठी लिखदी कल ? याद है ?

'हाँ अम्मा ! भाभी के सामने ही लिखदी थी मैंने।'

मुन्नू रसोई में चला गया।

वृद्धा मंदिर चली गई। नीलिमा नीचे आगई।

तभी डाकिया चिल्लाया: एक्सप्रेस चिट्ठी ! कमलादेवी !

कमला का मन आशंका से भर उठा।

दस्तखत करके पत्र खोलने लगी तो हाथ काँप रहे थे।

'किसकी चिट्ठी है भाभी !' नीलिमा ने संदेह भरे स्वर से पूछा।

'भैया की !' कमला ने तड़ाक से कहा।

'ओह हो। तो नाराज़ क्यों होती हो। भाई का घमंड क्या हमेशा चलता है भाभी ! हमारा ही नहीं रहा।'

कमला का दिमाग उलझ सा गया।

चिट्ठी पढ़ते ही कमला की आँखें झुक गईं और

आँसू आगये।

उसे रोते देख नीलिमा ने शंका भरे स्वर में कहा: क्या बात है ?

कमला ने कहा: अब मैं क्या करूँ बीबी !

नीलिमा ने पत्र पढ़ा।

राज की चपेट में कमला का भाई श्यामलाल फँस गया था। पटवारी था, रिश्वत में पकड़ा जाकर नौकरी से हाथ धो बैठा। दुश्मनों ने मुकद्दमे लगा दिये। जमीन थी कुछ पास, उसका लगान भरना बाकी था। क्षमा माँगी थी कि नीलकांत की मौत पर न आसका, क्योंकि पत्नी मृत्यु-शैया पर पड़ी थी। घर में खाने को न था।

कमला सस्वर रो पड़ी और कमरे में चली गई।

नीलिमा ने झुँझलाहट से कहा : रोने से क्या होगा भाभी ! राज क्या कुछ छोड़ेगा ? कहीं जमीन बिककर भी रुपये न इकट्ठे हुए, कौन पूछता है जमीन को आजकल, तो फिर घर की ईंटें भी नीलाम कर तो जायेंगे वे लोग ! बड़े कसाई होते हैं।

कमला तड़प कर बिलबिला कर रह गई।

मुन्नू आया तो बोला: मां रोती क्यों हो ?

कमला ने आँखें पोंछी।

'बुआजी लड़ी होंगी।'

'छि: ऐसा नहीं कहते।'

देखा, किसी ने सुना तो नहीं। नीलिमा दूर थी, तो जान में जान आई।

नीलिमा ने पत्र आगे पढ़ा और कहा: अरे भाभी ! तुम तो बीच में ही रोने लगीं। आगे नहीं पढ़ा।

कमला बाहर आई। आँखें उत्सुक थीं।

'रुपये माँगे हैं तुमसे !'

'मुझसे !'

'हाँ, सुराग लग गया होगा कहीं से कि वहन को चंदा मिला है।' नीलिमा ने तिक्त स्वर से कहा।

कमला कट गई।

रसोईघर में सारा धुँआ जैसे कमला के भीतर ही इकट्ठा होता रहा। घुटन में साँस लेना भी कठिन हो गया था :

कैसे दूर होगा वह कष्ट ?

क्या वह रुपये दे सकेगी ?

माताजी देदेंगी ?

ननद उन्हें भड़कायेगी नहीं ?

और देही दिये और भैया ने न लौटाये तो ?

भाभी क्या कम लड़ाका है ?

अपनी अपनी सोचती है।

कमला कुछ निश्चित नहीं कर सकी।

वह एक ऐसी दलदल में फँस गई थी, जहाँ वह पाँव धरती थी तो सब कुछ धसकता दीखता था। रुपया देना भी उस रेगिस्तान के फैलाव जैसा था, जिसमें कोई पौधा तक नहीं था।

जब वृद्धा मन्दिर से लौटी तब कमला का जी किया दौड़कर रो पड़े और सास से सब कहदे, पर तभी नीलिमा की

आवाज सुनाई दी : अम्मा। चिट्ठी आई है।

'किसकी बेटी ?' पूजा से शांत मन वृद्धा ने पूछा।

'भाभी के भैया की।' नीलिमा ने कहा । फिर कमला नहीं सुन सकी। कुछ देर में ही वृद्धा ने पुकारा : बहू !

'आई !' कमला स्वर के साथ खिंची चली गई ।

वृद्धा ने उत्सुकता से कहा : बहू ! यह लाला ने क्या मुसीबत मोल लेली। रिश्वत लेता था। सो भी ऐसे ?

कमला का सिर शर्म से झुक गया। कहना चाहा कि यह शायद दुश्मनों का जाल था, पर कह नहीं सकी।

वृद्धा ने पूछा : अब क्या होगा ?

नीलिमा ने कहा : मुकद्दमा भी तो चलेगा। भगवान न करे, कहीं जेल हो जाये ! बिना पैसे का आदमी दुश्मनों से क्या लड़ेगा !

'गाँव में कोई मदद न करेगा ?' वृद्धा ने पूछा।

कमला ने नीचे देखते हुए कहा माता जी ! मैं उस घर की नहीं इस घर की हूँ। क्या जानूँ ब्याह के बाद जो लड़की मायके में मन रमाती है, वह दोनों तरफ का नास करती है, मेरी माँ यही कहती थी।'

'अरे हाँ हाँ।' नीलिमा ने कठोर और तीखे स्वर से कहा: 'फिर यह चिट्ठी देखकर रोईं क्यों थीं भाभी !'

वृद्धा ने देखा। भारी पलक क्षण भर काँपे और फिर स्थिर होगये। कमला स्तब्ध खड़ी रही।

नीलिमा ने कहा : भाभी। मेरे नहाने को पानी धरा है न ?

कमला पानी धरने मुड़ गई । पीछे से नीलिमा ने कहा: मैं तो जल्दी चली जाऊँगी भाभी ! वे आयेंगे अब तुम लोगों के रूपये बैंक में धरवाने, तब ही चली जाऊँगी ।

'क्या कहती हो बीबी।' कमला ने टोक कर कहा 'मैं कब कहती हुँ । तुम रहती हो तो मुझे तो हिम्मत सी बँधी रहती है । अभी जाने की क्या बात उठादी ?'

बात वहीं खत्म हो गई ।

३००) की बात कमला के दिमाग में आरे की तरह चलने लगी । पर वह एक असह्य यंत्रणा थी । उन रुपयों की सोचते ही मुन्नू का भविष्य सामने आजाता था । क्या वह उन रूपयों को छू भी सकती थी ।

वृद्धा ने कुछ नहीं पूछा । टाल जाने में ही जैसे कल्याण था । नीलिमा ने नहाते में से पुकार कर कहा: भाभी ! जरा तेल दे जाना !

तेल लाई तो ननद ने कहा : अरे साबुन कहाँ गया !

'वहीं' तो है आले में ।' कमला ने सुझाया ।

फिर वह रसोई में लौट गई ।

मूलकथा : उपसंहार

वही कहानी : ज़रा आगे चली ।

विधवा और शहीद

संपादक नंदराम ने मेज़ पर कुहनियाँ टेककर कहा : अरे कोई है ?

फिर टन्नू !

घंटी बजी ।

एक चपरासी ने प्रवेश किया ।

'न्यूज़ आगई ।'

'देखता हूँ ।'

'यह उपसम्पादक बड़ा ढीला काम करता है । कॉलेजों से पढ़कर निकल आते हैं, समझते हैं जाने कितने बड़े आदमी हो गये । अपने सामने किसी को समझते ही नहीं ! परमेश्वर जी को कोई आदमी ही नहीं मिला ? जाओ बुला कर लाओ ।'

जब दिवाकर भीतर घुसा तो उसने प्रणाम किया । उसके खड़े होने में औद्धत्य का भाव था । हर आदमी जो अभाव का अनुभव करता है, अपनी हीनत्व की भावना में, अपने धन और अधिकार की कमी को अपने अहं और पाण्डित्य के छल से ढँकना चाहता है । दिवाकर बी० ए० था, और उसकी राय में जिस कुर्सी पर नंदराम था वहाँ स्वयं उसे ही

होना चाहिये था। दिवाकर ने 'स्पेशल इंगलिश' लेकर बी० ए० किया था। नन्दराम को वह अँग्रेजी न जानने के कारण ठोठ मानता था।

'आपने वह रिपोर्ट लिख वाली दिवाकर जी ?'

'जी हाँ, मैंने उनसे कह दिया है। मैंने उन्हें टाइम के रैस्ट्रिकसन्स के बारे में भी बता दिया है। कहते थे सोरली वे शाम तक रेगुलेसन्स को भी पढ़ डालेंगे।'

नंदराम परेशान से दिखे।

'जी', दिवाकर ने कहा—'वह मैन्डेट था न उसके बारे में आपने क्या तय किया !'

'आप इस वक्त और सब बातें छोड़िये। जाइये वह परमेश्वर वाली रिपोर्ट ले आइये। खूब बढ़ा-चढ़ाकर लिख दी है न ?'

'जी हाँ वे नये रेडियोलौजिस्ट आये हैं न शहर में भटनागर साहब···वे आये थे···'

'अरे कब ! ज़रा घर ले जाते न उन्हें, रेडियो दिखा देते !'

दिवाकर की मुस्कराहट न छिप सकी। उसने हालाँकि विशारद करके शायद ज़रिया साहित्यरत्न के बी० ए० का टिकट कटाया था, फिर भी इतना जान गया था, क्योंकि बकौल उसके 'जर्नल नालेज' के बिना कुछ लाभ नहीं था। अपनी किताबी बक़फियत से वह उस दिन आगे बढ़ गया था जब एक बार वह अपने एक मित्र के साथ कहीं क्लब में पहुँच गया। वहाँ उसे लोगों ने टैनिस खिलाई। दूसरे दिन वह फिर

पहुँचा। वहाँ तीन आदमी खेल रहे थे। चौथा रैकैट एक मेज़ पर रखा था। एक ने कहा : आओ भई।'

दिवाकर ने कहा था : 'आए कैसे, बल्ला कहाँ है ?'

'मेज़ पर है तो।'

'मगर यह तो और तरह का है। इस पर चौखटा सा जड़ा हुआ है। बड़ा भारी है।'

'विलायत में इसी ढँग का चलता है।

दिवाकर फौरन 'प्रेस' में कसे रैकिट को लेकर खेलने लग गया था और तब उसका वेहद मज़ाक उड़ा था।

अब वह 'नालेज' बढ़ा चुका था। फौरन बोला : वह रेडियो नहीं बनाते। वे तो डाक्टर हैं।

नंदराम एकदम सकपका गये। फिर हठात् हँस पड़े। बोले : तब तो तुम समझते हो ! हहहह···

दिवाकर कटकर रह गया।

'हाँ जाओ ! रिपोर्ट ले आओ !'

उसके जाते ही नन्दराम ने अँगरेजी का कोष निकाला और रेडियोलौजिस्ट देखना चाहा, मगर उन्हें आर ई डी के आरम्भ से वह नहीं मिल सका। उन्होंने फिर देखने का इरादा करके उसे रख दिया। आज़ादी की एक मुसीबत थी अँगरेज़ी भाषा। पहले जय बोलने का ज़माना था, तब हिन्दी में काम चल जाता था, अब कमबख़्त रेडियोलौजिस्ट का जमाना था। पहले हरखू मनकू को बहकाने की बात थी, अब पुरानी नौकर-शाही के फीतों से मिलना पड़ता था।

दिवाकर ने रिपोर्ट लाकर रखी।

'तुमने पढ़ ली है ?'

'जी हाँ।'

ठीक है ?'

'जी हाँ। पर मैने सरसरी निगाह से पढ़ी है। दीक्षितजी ने लिखी है। आप पढ़ लीजिये। वैसे, आप देख लीजिये अब !

'अच्छा यह बात है !'

'अब आप ही देख जो लेंगे।'

'अच्छी वात है।'

दिवाकर के चले जाने पर नन्दराम ने अँगड़ाई ली। एक सिगरेट पी। फिर कुर्सी पर आलथी-पालथी मारकर बैठ गये और तब उसने लाल पेंसिल उठाली।

× × ×

नीली स्याही से लिखे अक्षरों में लाल पेंसिल को देखकर खलबली मच गई।

मगर लाल पेंसिल मुस्कराई।

'ओ लाल पेंसिल ! ओ लाल पेंसिल !'

हाँ नीली स्याही के अक्षरो ! हां नीली स्याही के अक्षरो !'

'ओ लाल पेंसिल ! तुम कौन हो ?'

सफ़ेद को कोई स्याह करे तो मैं उसको काटा करती हूँ।'

'ऐसा क्यों करती हो लाल पेंसिल !'

'नीले अक्षरो ! तुम बड़े लुच्चे होते हो ! तुम किसी की भी इज्जत बिगाड़ सकते हो। लिहाज़ा मुझे भेजा जाता है कि मैं तुम्हारी कतरब्यौंत किया करूँ।'

हत्यारी हो तुम लाल पेंसिल ! तुम हत्यारी हो !'

'मैं हत्यारी कैसे हूँ, गुण्डे हो तुम लोग ! बिना सज़ा पाये तुम क्या ठीक रहते हो !'

'अच्छा लाल पेंसिल, तुम हमारी मौत हो :'

'मगर मैं तुम में से किसी की ज़िंदगी भी हूँ ।'

'सो कैसे ?'

'मैं कुछ को काटूँगी, कुछ को चुनूँगी ।'

'अच्छा लाल पेंसिल ! अच्छा लाल पेंसिल ! एक बात बताओगी ।'

'पूछो नीले अक्षरो ! पूछो नीले अक्षरो !'

'तुम इसमें से किस-किस को काटोगी ?'

'अच्छा तुम मेरे सामने आते जाओ मैं तुम्हें देख-देखकर बताती जाऊँगी ।'

'नहीं आते ।'

'आना पड़ेगा ।'

'हम किसी की मेहनत हैं, रोटी हैं ।'

'मैं किसी की इज़्ज़त हूँ, इंसाफ़ हूँ ।'

'तुम इंसाफ़ हो तो तुम्हारा रंग खूनी क्यों है ?

'क्योंकि इंसाफ़ खून से मिलता है। तुम रोटी हो तो नीली क्यों हो ?' 'हम कमज़ोरी से ऐसे हो गये हैं।

'बात कम करो आगे बढ़ो ।'

'अच्छा मरने आते है ।'

'नीले अक्षरो । एक-एक करके ।'

'हाँ लाल पेंसिल। देखो हमें।......ग्राम......में जलसा हुआ।

लाल पेंसिल : ठीक नहीं होना चाहिये बड़ी ज़ोर का जलसा हुआ।

'पाँच हज़ार आदमियों की भीड़ हुई।'

लाल पेंसिल : सिर्फ पाँच हज़ार की !

'हाँ, वह भी मुश्किल से हुई, क्योंकि लोग कुछ चिढ़ गये हैं। काँग्रेसी नेता इस क़दर रिश्वत लेते हैं कि लोगों को इकट्ठा करने के लिये जातिवाद का सहारा लेना पड़ा। गाँव मालियों का था। बाकी जातियों में धाकर और गूजर थे। वे नाराज़ थे इसलिये मालियों में थोड़ा सा रुपया भी बाँटना पड़ा।'

लाल पेंसिल खामोश ! खुराफ़ात। सब निकल जाओ।

'बमुश्किल ऐसे लोग लुगाई तैयार किये जा सके तो ढोल बजाते गाते वहाँ मीटिंग में पहुँच सकते।'

लाल पेंसिल : कट जाओ।

'गाँव में पुराने अवशेष थे। पुराने खयालात के लोग तो काँग्रेस तक की प्रगति को समझ नहीं रहे थे। वे आपसी झगड़ों में पड़े थे।'

लाल पेंसिल : आगे चलो, पता नहीं क्या नतीजा निकलेगा।

वे चाहते थे राजा का निज़ाम लौट आये। जनता में इतनी जहालत थी कि जय राजा की बोली जाती थी और इतने अधिकार काँग्रेस के द्वारा पा जाने पर भी कुछ निश्चय

नहीं कर पाती थी।'

लाल पेंसिल कट जाओ !

'गाँव में एक विधवा थी, नाम था कमला। लोग कहते थे आपस में कि उसका वहाँ के बौहरगत करने वाले महंत चन्दनदास से छिपे तौर पर नाजायज़ ताल्लुक था।'

ला० पेंसिल लाहौल बिलाक़ुवत, कट !

'मगर अब काँग्रेस के उदय ने उसे एक शहीद की पत्नी बना दिया था। वह एक निहायत मामूली सी औरत थी, फिर भी उससे एक भाषण दिलवाया गया। और वह कुछ खास बोल भी न पाई। कुछ अजीब मखौल सा रहा।'

ला० पें० : कट ! कट !

'उस औरत के पति नीलकांत नामक काँग्रेस के एक पुराने नेता थे। सुरेश जी ने उनकी बहुत तारीफ भी की थी। परमेश्वर जी ने उनके गुन गाये, लेकिन उनसे भी अधिक उन्होंने कमला देवी के गुन गाये। जलसा कर-कराके उन्होंने ऐलान किया कि शहीद की विधवा को सरकार २५) महीना पेंशन देना मंजूर कर चुकी है। इन्कलाब! ज़िंदाबाद !'

ला० पें० : बिलकुल कट !

× × ×

'दिवाकर जी !'

'जी हाँ।'

'आप कहते थे आपने इसे पढ़ लिया है ?'

'जी मैंने तो इतना ही कहा पर आप पर ही तो सब छोड़ दिया था !

'दीक्षितजी को कल से अलहदा कर दीजिये। यह नोटिस हो जायेगा, उन्हें। हाँ, आप ज़रा इसे अच्छी तरह लिख डालिये। यह दीक्षित कम्युनिस्ट है या संघी ?'

'जी कुछ नहीं है, अपने को कवि मानता है।'

'उफ़! दोनों से गया बीता! ले जाइये!'

'अभी लीजिये।

× × ×

रिमझिम फुहार गिर रही थी। आकाश में घने बादल छाये हुए थे। कभी-कभी बिजली सफेद सांपिन सी फुफकार बादलों में खोजाती। फिर मोर बोलने लगते।

महन्त चन्दनदास ने आँखों से चश्मा हटा दिया और गावतकिये के सहारे पीठ टिकाकर आँखें मूँदलीं। दूर कहीं कोई पक्षी उस भीगे सन्नाटे में बोल उठा। सामने के वृक्ष भीगे भीगे से खड़े थे।

द्वार पर आहट सी सुनाई दी।

आँख खोलीं।

ठंडी हवा का झोंका आया जिसे कुछ रोकती सी खड़ी थी कमला। अधेड़ स्त्री!

'आओ मुन्नू की अम्मा!'

'पालागन महाराज!'

'बैठो!'

स्त्री बैठ गई।

महन्त जी ने कहा: 'तुमने सुना ?'

'क्या महाराज ?'

'अखबार में खबर आई है ?'

'कैसी ?'

'पढ़ लो तुम तो पढ़ना जानती हो !'

'अब महाराज ही सुना दें।'

'अच्छा, लाओ मैं ही सुना दूँ।'

महन्त जी ने चश्मा नाक पर चढ़ाया और अखबार खोल कर पढ़ने लगे—

"'ग्राम में कांग्रेस का एक विशाल जलसा हुआ। दस हज़ार से भी अधिक लोग दूर-दूर के गाँवों से इकट्ठे हुए। समर्थ परमत्यागी जनता के सच्चे सेवक वीर नेता परमेश्वर जी के सभापतित्व में कार्यवाही प्रारम्भ हुई। किसानों के कष्टों को देखते हुए आदरणीय परमेश्वर जी ने कड़े शब्दों में अनाचार की निन्दा की और नौकरशाही को डाँटा कि वह अपना रवैया बदले। स्वतंत्र भारत परतंत्र भारत की बातों को सहन नहीं कर सकेगा। मन्त्री जी को तार दिया गया। उनका आश्वासन भी प्राप्त हुआ कि वे इस सम्बन्ध में शासकीय मर्यादा को रखते हुए विभागीय कारवाही करेंगे। आदरणीय परमेश्वर जी ने विरोधियों को चुनौती दी कि नहर-विभाग में रिश्वत बराये नाम हो तो हो, वर्ना नहीं है। यह जनता का ही अपराध है कि वह रिश्वत देती है। जनता को भी अपना नैतिक स्तर उठाना चाहिए। हम जनता से कहते हैं, वह आये, आगे आये और प्रमाणित करे कि रिश्वत अमुक ने इस प्रकार से

ली। उसे अवश्य दण्डित किया जायेगा। सुधार एक दिन में नहीं हो सकता।

सभा की विशेषता यह भी थी कि स्वर्गीय शहीद नीलकांत जी की धर्मपत्नी साध्वी कमला देवी जिन्होंने अनेक कठोर कष्ट सहे और उनसे निरन्तर संघर्ष करते हुए अपने पुत्र का राष्ट्रीय परम्परा में पालन किया, सभा में आई थीं। काँग्रेस के वयोवृद्ध वालन्टियर सुरेश जी, स्वयं अपने महान और प्रिय नेता परमेश्वर जी के आगमन से प्रसन्न होकर, कमला देवी को बुलाने गये थे। पतिव्रता कमला देवी ने शोक भरी आँखों से देखते हुए प्रवेश किया। जनता अपने स्वर्गीय नेता की पत्नी को देखकर ब्रिटिश शासन के अत्याचारों का स्मरण करके दुख से व्याकुल हो उठी। कई महिलाएँ साध्वी का तेजस्वी मुख देखकर जय-जयकार करने लगीं। उनको फूलमालाएँ पहना कर स्वागत किया गया। तदन्तर परोपकारों में ही जीवन को निस्स्वार्थ भाव से होम देने वाले परमेश्वर जी ने हजारों की भीड़ में घोषणा की कि यह स्वतन्त्र भारत की सरकार बलिदानों के बल पर खड़ी हुई है। इसने अपना पहला कर्त्तव्य बलिदानियों की सहायता करना बनाया है। इसीलिये स्वर्गीय शहीद की पुण्यस्मृति में उनकी धर्म-पत्नी को २५) माहवार सरकार देना स्वीकार करती है। महान नेता परमेश्वर जी की यह सिंहगर्जना सुनकर सामंतशाही के खंडहर भी हिल उठे और जनता काँग्रेस के नाम पर झूम रही है। स्वयं ही लोगों ने परमेश्वर जी को वचन दिया कि चुनाव में काँग्रेस को ही

वोट दिया जायेगा ।

महंतजी ने अखबार रखकर देखा ।

कमला नीचे देख रही थी ।

कुछ देर प्रतीक्षा करके भी जब महन्तजी ने उसे उसी मुद्रा में देखा तव धीरे से कहा : कमला !

कमला जैसे चौंक उठी । उसने कहा : महाराज !

'क्या सोच रही हो ?'

चुप ।

'अब तुम्हारा लड़का बी० ए० होगया ।

चुप ।

फिर तुम्हें किसकी कमी है अब ?

कमला नहीं बोली ।

महन्त मुस्करा दिये । कहा : सोचती होगी तुम ! वह दिन भी ऐसा ही था ! जब ऐसी ही फुहार थी, ऐसी ही ठंडी हवा थी, जब तुम्हें दया आगई थी, और तुम तो दुखियारी थीं ही, उस समय.....................

'महाराज !' कमला ने कहा—'मैं यह नहीं सोच रही थी!'

'तो !'

'मुझे उस अभागे की याद आगई, जो जिन्दा रहा तो दंगमदंगा, मरे पै दीनी गंगा ।'

'कौन ? नीलकांत ।'

'हाँ महाराज! '

'उस सबको भूल जाओ, कमला । पाप मन का होता है । मैं ही पापी हूँ ।'

'नहीं महाराज । आप देवता हैं। आपने किसी की मजबूरी का फ़ायदा नहीं उठाया ।'

बाहर से आवाज आई: महंतजी महाराज !

'कौन ?'

'मैं हूँ सुरेश ।'

'आजाइये ।'

भीतर एक मैले से कपड़े पहनने वाला व्यक्ति घुस आया और उसने कमला को देखकर कहा : अच्छा कमलादेवी भी हैं।

'बैठिये ।'

'बैठता हूँ ।'

'कैसे कष्ट किया ?'

'सोचा था, अब शहर जाऊँ लेकिन फिर सोचा मिलता चलूँ। महाराज ! मैंने सन्त विनोबा के भूमिदान यज्ञ के लिये अपना जीवन अर्पित कर दिया है ।,

'बड़ा धार्मिक कार्य है ।'

'आप देख रहे हैं कांगरेस धन के, अधिकार के रास्ते पर चली गई है । हमारा उद्देश्य यह नहीं था । बापू इस देश में रामराज्य बसाना चाहते थे, वह कहाँ आया ।'

'ठीक कहते हैं सुरेशजी ! वह कहीं नहीं दिखता ।'

'देखिये ! चारों ओर ढोंग ही ढोंग दिखाई देता है। काँगरेस में सचरित्रता नहीं रही । चारों ओर द्वेष और पाखण्ड दिखाई देता है ।'

कमला ने कहा : महाराज ! समय की बलिहारी है ।

'ठीक कहती हैं। आप जैसी तपस्विनी स्त्री को यह कहने का अधिकार है, जिसने भारतीय गौरव को जीवित रखा है। मैंने सुना है आपने सारे पाप के प्रलोभनों को ठोकर देकर गरीबी में जीवन बिताया है। सादा रहन-सहन, ऊँचे विचार, धन्य है!'

महन्तजी ने बात पलटी। कहा: तो फिर आज तो भोजन करके ही जाना होगा।

'अरे नहीं, नहीं'·····

'क्यों··············'

'आप क्यों कष्ट करते हैं?'

'इसमें कष्ट की क्या बात है?'

कमला ने टोका: 'महाराज! सुरेशजी को गाँव में क्या खाने को मिलेगा हम लोगों के यहाँ! वही रूखा सूखा!'

'हीहीहीही, 'सुरेशजी हँसे। कहा— 'यों कष्ट होगा कि मैं गाय का घी खाता हूँ। मधु चाहिये मुझे। अन्यथा गेहूँ की रोटी मेरे मुँह में चबते चबते फिसल जाती है।'

'तो महाराज!' कमला ने महन्त की ओर देख कर कहा: 'इतना तो हो जायेगा?'

'क्यों नहीं?' महन्त जी ने कहा और मुस्कराये।

'हाँ सुरेश जी,' कमला ने कहा—'अब तो बस दौरा ही करते रहते होंगे, जमीक इकट्ठी करते!'

'इस बिचारी के पास भी जमीन नहीं है।' महन्तजी ने कहा—'लड़का नौकर होगया है। मगर शहर में रहता है। यह कहाँ जायेगी? कुछ जमीन तो मिलनी चाहिये।'

'जमीन ! भूदान से मिलेगी !' सुरेश जी ने कहा।

कमला ने उठते हुए कहा: 'तो फिर मैं चलूँ।'

'लड़का गया ?' सुरेश जी ने पूछा।

'हाँ गया।'

'बड़ा अच्छा लड़का है। बिल्कुल नीलकांत पर गया है। क्यों न हो ! जब वह शहीद का बेटा है और वीर माता ने उसे पाला है। तब क्यों न उसका भी भविष्य उज्ज्वल हो।'

'आपका आशीर्वाद है।' कमला ने सिर झुका कर कहा।

पूज्या माता जी,

दफ्तर से लौटने पर मुझे आपका पत्र मिल गया। इधर मैं परमेश्वरजी से मिलने गया था। वहाँ मुझे श्री दुर्गाप्रसाद नामके एक सज्जन मिले थे। मालूम हुआ, उनसे बातचीत में, वे मेरे फूफा थे। संग में बूआ थीं। उनका लड़का भी था, जो शायद अब सोलह सत्तरह साल का है। उसका नाम उन्होंने रतनकुमार बताया था। वह मुझे भैया भैया कहता है। वे लोग एक धरमशाला में ठहरे हैं। फूफाजी परमेश्वर जी से रतनकुमार को नौकरी दिलवाने की कोशिश कर रहे हैं। रतन ने मैट्रिक कर लिया है। बूआ का कहना है कि अब ज्यादा पढ़ना बेकार है। जब परमेश्वर जी ने बताया कि जलसे में तुमने भाषण दिया था, तब वे गद्गद होगये और कहने लगे : हम भी गाँव जायँगे। हमारा तो एक ही खान्दान है, बूआ कहती थीं कि भाभी को उनसे बहुत प्यार था। बरसों से मैं सुनता आरहा हूँ कि यह लोग बड़े खराब हैं, मगर, अभी तक मुझे तो ऐसी कोई बात नहीं मिली। बूआ

तो मुझसे बड़ा स्नेह रखती हैं। यह लोग तो बड़े मिलनसार और अच्छे हैं। महन्तजी किसी को गद्दी देना चाहते ही हैं। इनकी जाति और कुल भी अच्छा है। तुम पूछ देखना, अगर वे लल्ला यानी रतनकुमार को चुन लें। रतनदास नाम भी अच्छा रहेगा। उसने मैट्रिक में संस्कृत पढ़ी भी है। और पढ़ लेगा। बूआ कहती थीं कि बेटा! अगर ऐसा होजाये तो तुम्हारे गुन कभी नहीं भूलेंगे। मैंने कह दिया कि लड़के का फिर ब्याह नहीं हो सकेगा। फूफा जी ने कहा : ब्याह क्या इतनी बड़ी चीज है। तुम्हें ताज्जुब होगा कि उसी शाम को मामाजी भी यहीं आगये और वे अपने लड़के के लिये कोशिश कर रहे हैं। उनका ख़याल यह है कि अगर तुम कहदो तो महन्तजी मान जायेंगे। मैंने कहा : हमारा महंतजी का व्यापार का संबंध है, जिसमें नफा नुकसान सारे सम्बन्धों से ऊपर रहता है। वैसे मैं माँ से लिखकर पूछ देखूँगा। जवाब जल्दी देना। परमेश्वर जी की बातों से मालूम हुआ कि वे रतन की तरफ़ नहीं हैं। उसे वे खादी उद्योग विकास केन्द्र में भेजकर शिक्षा दिलाना चाहते हैं, जिससे दो साल में ही वह ढाई सौ रुपये माहवार तक पा सकेगा और हमारे परिवार की राष्ट्रीय परंपरा भी निभती रहेगी। उन्होंने बूआ से कहा है कि वे इसी शहर में रहें। रतन को रखें। शायद बूआ को भी स्त्री संघ के सिलसिले में कोई नौकरी और एक जीप मिल जाये। वे गाँव गाँव सुधार करती घूमती रहेंगी। फूफाजी अपनी नौकरी पर लौट जायेंगे। इसीलिये ज्यादा अच्छा यही होगा

कि तुम मामाजी के लड़के के लिये महन्त गद्दी की कोशिश करो। अच्छा ही है, बड़े लोग हैं, आजकल नौकरी कहाँ मिलती है ! कहते थे परमेश्वर जी कि कमलादेवी गाँव में क्यों जीवन नष्ट कर रही हैं। उन जैसी तपस्विनी स्त्री को तो पूरे जोश के साथ सोई हुई जनता को जगाने में लग जाना चाहिये। अभी कमलादेवी की आयु पेंशन की थोड़े ही है। होगी उन्तालीस चालीस की। जैसे उनकी नन्द काम करने को तैयार हैं, वैसे ही वे भी कर सकती हैं। मैंने कहा: पूछ कर जबाब देता हूँ। वैसे मेरी राय में तो इसमें अच्छा ही रहेगा। सब जगह पूछ हो जायेगी।

तुम्हारा प्यारा बेटा,

मुन्नू।

× × × ×

चिरंजीव मुन्नू को उसकी माँ का आशीर्वाद प्राप्त हो। आगे हाल यह है बेटा कि तुम्हारा पत्र आया, हाल मालूम हुआ महन्तजी की मैंने खुशामद करके उन्हें तैयार कर लिया है, वे गद्दी भैया श्यामलाल के एक बेटे को देदेंगे। वे खुद अब हरद्वार जारहे हैं। अब मेरी राय में तुम ब्याह करलो, घर बसाओ। बूआ की बात और है, वे नेतागिरी कर सकती हैं, मैं नहीं कर पाऊँगी। कल सुरेश जी मिले थे। कहते थे उन्होंने कांग्रेस से इस्तीफा देकर भूमिदान यज्ञ में अपने को होम दिया है। रतन को नौकरी मिल रही है, बहुत अच्छी बात है। अपनी तनखा अपने पास रखना। होशियारी की बहुत जरूरत है। मेरा मन भी अब इस संसार से ऊब गया है।

सोच रही हूँ कि मैं भी महंतजी से अपने रुपये लेकर अब हरद्वार ही चली जाऊँ। जिन महन्तजी ने बिना स्वारथ के मुझे बेसहारा आसरथहीन अवस्था में मदद की थी, उन देवता मानुस की सेवा करती रहूँगी और बाकी समय भगवान के चरणों में लगी रहूँगी। जबाव देना। खानेपीने का अच्छा ध्यान रखना। तन्दुरुस्ती हजार न्यामत। आपबल तो जगबल! भगवान तुम्हें सदा सुखी रखें।

× × ×

मेरा उपन्यास समाप्त होगया।

अब कोई बात कहनी बाकी नहीं रही है।

इसलिये सोचता हूँ कि कलम रखदूँ।

लेकिन कथा का सत्य उसकी कथात्मकता में ही समाप्त नहीं होजाया करता। उसका विकास अपने पार्श्ववर्त्ती वातावरण के प्रतिबिंब में हुआ करता है। इसलिये उसको भी कह देना आवश्यक है।

व्यक्तित्व मनुष्य का एकतार विश्लेषण नहीं होता। वह परिस्थितिजन्य विषमता का द्वंद्वों में समन्वय हुआ करता है।

नन्दराम का अहम् एक कुण्ठा है, परमेश्वर का समाज की मूर्खता का परिणाम। सुरेश की विह्वलता एक भटकन है, किंतु बाँके, और दुरगापरसाद की नहीं। यों नीलिमा और कमला की समस्या भी एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचते पहुँचते अपना रूप बदल जाती है। श्यामलाल और महंत का रूप अपने वैचित्र्य में नहीं है साधारणत्व में ही आकर्षक है।

मैं व्यंग्य के लिये-व्यंग्य नहीं करता;

मैं प्रचार की मान्यता को सिद्ध करके खंडसत्य को पूर्ण कह कर प्रतिष्ठापित नहीं करना चाहता ।

मेरा मैं यदि समाज का मैं है तो वह मेरे पार्थिवत्व का अपमान है। यदि वह उसका विरोधी है तो वह मेरे चेतन को जर्जर करना है । अतः मैं एक नया सामंजस्य चाहता हूँ । उस सामंजस्य का रूप मैं किस रक्तमांस की देह में जाकर पकड़ूँ ?

संघर्ष अपनी अति में उपहास न बन जाये, इसीलिये मैं सावधान होगया हूँ ।

परिशिष्ट-दो

[दर कूँच, दर मुकाम का जमाना नहीं रहा । पीछे मुड़ कर देखने से दिल का दर्द बढ़ता है । हवा के पेड़ को आवाज के चिथड़ों से सजा कर समय-प्रेत का होना करके मिलेगा भी क्या ? फ़िर भी किनारे मिलेंगे तो धारा तो वह कर ही रहेगी ! तो जब यही मजबूरी है तो गत बजने दो वही पुरानी, मौत की शमशीर कलेजे में उतरनी है तो उतरने दो । आगे आकर किनारे पर छितर जाने वाली हर लहर फिर लौट जाती है, समुद्र के गर्भ में, जहाँ से फिर लौटती है बन कर ताँतीन का पंजा...

मजबूरी में शराफत का मोलः खुशामद

तीसरा पहर होने आरहा था। कमला ने अभी तक कुछ भी नहीं खाया था। चिंता के कारण मानों भूख दब गई थी। सास और ननद खा चुकी थीं। सास ने सदा की भाँति बाद में खायेगी सोचकर इस बारे में कोई चिंता नहीं की। और कमला सोच रही थी। जब वह नयी दुल्हन बनकर आई थी तब उसकी कितनी अधिक पूछ होती थी! अब वेही हैं, तो कोई यह पूछने वाला भी न था कि वह खाती है या नहीं? जीना है तो जी, वर्ना कोई बात नहीं! यह विचार ज्यों-ज्यों बढ़ता गया अन्तर की वेदना भी बढ़ती गई। वे होते तो पूछते नहीं? जब तक पूछ न लेते तब तक क्या छोड़ते? वह भीतर ही भीतर कराह उठी, जैसे किसी ने उसके माँस को कुरेद डाला।

मुन्नू ने आकर कहा : माँ! खाना खा लिया!

कमला को लगा जैसे जीवन भार नहीं था। वह कितनी सुखद कल्पना थी कि एक प्राणी जीवित था जो उसकी चिंता करता था। परन्तु यह उसकी कल्पना-मात्र थी। मुन्नू का स्वर सुनकर वृद्धा ने कहा : बहू।

'माँ, जी!'

'अरे खाना नहीं क्यों खाया अभी!

बहू चुप रही।

नीलिमा ने व्यंग किया: भैया की सोच रही होगी बिचारी ! ऐसे में किसी को खाना भायेगा भी कैसे ? सच रुपया भी दे दें यहाँ से तो किस भरोसे ! यहीं कौन खजाने गड़े हैं। दो विधवा हैं, एक बच्चा है। तुम्हारे भइया आखिर तो आदमी हैं। फिर बिसवास बड़ा होता है अम्मा। ब्याह पर उन्होंने कैसी धूल उड़ाई थी ! ८००) टपकाये बस। कह दिया और नहीं हैं। नीलू भैया थे वे तो, और होता तो लड़की छोड़ आता। अब बताओ न ? जमीन ही क्यों न बेच दी ? बहन के आगे कोई हाथ पसारता है ?

'रहने दे बेटी,' वृद्धा ने कहा : गड़े मुर्दे उखाड़ कर क्या होगा ! अब कमला अपनी हुई, वहाँ की तो नहीं रही ? उसे सुनाने से फायदा ?'

नीलिमा ने कहा: सो तो जानती हूँ अम्मा ! पर ऐसा भी क्या गम ! मरे के लिये खाना एक दिन न छूटा, भैया का तीर ऐसा कलेजे में लगा कि रोटी गले में हुटकवच्चा बन गई ? अम्मा ! रुपये देने हों तो देदो, मगर लौटेंगे अगले जन्म में। आनसी में ले लेना। जिसने वहन की तरफ ही मुँह फ़ाड़ दिया ! अब क्या कहूँ। भाभी उन्हें खबर कैसे पड़ी कि यहाँ रुपये आये हैं, पहले तो कभी माँगे न थे ! तुमने लिखा होगा अपने भैया को !

कमला पत्थर सी बैठी रही।

'बहू !' 'वृद्धा ने कहा:' बुरा न मान। बिटिया तो हमारे

भले की ही कहती है। अब यहाँ कोई कमा कर लाने वाला भी तो नहीं है। अगर ये न आते तो हम क्या करते भला ? तब भी तो कोई इंतजाम होता या नहीं। अरे हमारे ही दाने दाने को मोहताज होने की नौबत आगई, ऐसे में क्या जमाई खिलाते हमें कि तुम्हारे भैया। बहू, अब तो अलग अलग घर है। एक काम करना बहू। तुम घर की आगे पीछे की सब बात भैया को लिखदो अपने !

कमला को लगा वह जीवित नहीं थी।

तर्क और होता है सत्य और। स्त्री स्वभाव दो तरह का होता है। एक मायके के लिये सुसराल को लूटने वाला, दूसरा अपने लिये यानी इस नाते सुसराल के लिये मायके पर डाका डालने वाला। स्त्री का स्वभाव यह भी है कि सुसराल की राई उसे पहांड़ लगती है और मायके की जूती में भी उसे खुशबू आती है। स्त्री अहसान करती है तो जता कर; पुरुष करेगा नहीं, करेगा तो जब तक स्त्री-बुद्धि न होगा, जतायेगा नहीं। कमला सिसककर रोने लगी।

'रोती क्यों हो भाभी,' नीलिमा ने कहा—'मैंने कुछ कड़ी बात कह दी हो तो माफ़ करना। तुम्हारा घर है, तुम मालकिन ठहरीं। अम्मा कितने दिन की हैं। तुम चाहे जैसे रुपया खरच करो। तुम्हारे नन्देऊजी आयेंगे, मैं तो अब चली जाऊँगी। अम्मा ! मुझे रोकना मत !

कमला ने आँखें पोंछ कर कहा : तुम्हारा घर है बीबी। चली कैसे जाओगी। मैंने रुपये देने को नहीं कहा, लेकिन क्या उनकी मुसीबत पर दुख भी करने की मनाही है ? वे होते

तो और बात थी। रही ब्याह की बात ! तो माता जी ने तो कभी कहा नहीं। अपनी अपनी सरधा जितनी होगी उतना ही तो खरच करेगा कोई! तुम कहोगी—झूंठ क्यों कहा? बुरा न मानना। बेटी जनम ले तो भगवान का कोई दण्ड नहीं है। नाक बिरादरी में सबकी होती है। सचाई वही ठीक है जिसमें कलेजा न फुंके। ऐसी झूंठ से क्या गया किसी का। मैं और थोड़ा ले आती तो मेरे घरवाले का दलिद्दर न दूर हो जाता। हाथ तो तब भी चलाने पड़ते ही। फिर किसी के फूल भी ले के काँटे न गड़ाये तो कौन भगवान की पूजा रुक गई ?

यह कहते हुए उसने बान चलाया कि आँसू बहे, मगर काले नाग को काला नाग डसे तो लहरा कोई नहीं खाता। नीलिमा ने आँखें तरेरीं जैसे क्या कहने ! पुरुष होता तो इतने में सिलबट्टे के बीच में हल्दी की कुटी गाँठ होजाता। नीलिमा की बात न थी, तिनका थी जो आँखों में करक रही थी।

शाम के ६ बज गये !

परमेश्वर ने पुकारा : माताजी !

कमला ने मुँह धोया।

परमेश्वर ने घुसते ही कहा : चलिये बस। समय हो गया। बहुत सी महिलाएँ आ भी गई हैं। हमारे सौभाग्य से स्त्रीसंघ की दो कार्य्यकत्रियाँ दिल्ली से आगई हैं हमारी प्रार्थना पर संघ की स्थापना करने। ६ का टाइम दिया था। सात से तो मीटिंग शुरू हो ही जानी चाहिये !

वृद्धा ने फीके स्वर से खिन्न होकर कहा : बेटा मैं क्या

करूँगी जाकर !

क्यों माताजी !

अरे यह तो नई उमर की लड़कियों का काम है । अब मुझ में इतना बल कहाँ । तुम दोनों को चाहो तो ले जाओ भइया ।

परमेश्वर ने कमला की ओर देखा । पीला चेहरा । समझ नहीं पाया वह । गहन वेदना में भी वह उसे आकर्षक लगी । वह जैसे हवा के झोंके से उखड़ा हुआ फूल था जो डाली पर लटक रहा था । परमेश्वर को लगा वह फूल उसका सहारा चाहता था । उसने उत्सुकता से पूछा : क्या बात है बहन ! उदास क्यों हो ?

'कुछ नहीं', कमला ने कहा । 'कुछ तो नहीं ।'

'उदास तो हो ! क्यों माताजी !'

'बेटा ! मैं क्या जानूँ ? अब बिचारी को ज़िंदगी भर हँसी खुशी है ही कहाँ ?

'रहने दो भाभी !' नीलिमा ने कहा : 'परमेश्वर भैया तो घर के से हैं । पर और कोई देखेगा तो क्या जाने सोचेगा तुम्हें कोई दुख है । अरे यह उतार चढ़ाव तो आते ही रहते हैं !

कमला ने सहसा कहा: 'बीबी !'

परन्तु नीलिमा ने कहा : अरे कहने से दरद बँट जाता है भाभी । जैसे तुम्हारे वे भैया हैं, ऐसे ही क्या परमेश्वर जी भी अब भैया से किसी तरह कम हैं ! इन्होंने जो किया, वह क्या कोई और करेगा ? सगा भाई तो क्या करेगा आजकल जो

इन्होंने कर दिखाया !'

परमेश्वर ने नीलिमा की ओर देखा। उसकी आँखों में एक विचित्र लपट थी, जिसे उसकी पलकों के दिये ने झट से पी लिया और फिर बाहर केवल पुतलियों का अँधेरा रह गया। वह समझ तो गया कि घर में कुछ झगड़ा पैदा जरूर होगया है। परन्तु कमला की गंभीरता ने उसे यह प्रगट किया कि वह उसे अब विश्वासपात्र नहीं समझती थी। उसे ! जिसने इतने रुपये इकट्ठे कराये। हठात् उसे सुरेशजी की याद आई। उन्हींने तो जोर दिया था कि स्त्रीसंघ के लिये कमला को बुलाया जाये। परमेश्वर के मन में फिर विष उफन आया। नीलिमा उसे लगा बहुत पास थी। पुराना विधुर परमेश्वर ! देखा उसने। वैधव्य और सुहाग में कितना अन्तर था। पाला पड़ जाने पर गुलाब का फूल थी कमला। कनेर का ही सही, पर थी तो नीलिमा अभी पत्तियों के बीच, ताज़ा खिला फूल ! कमला के प्रति उसके मन में एक अज्ञात वीभत्सता जाग उठी।

अचानक ही उसे ध्यान आया।

वह यहाँ क्यों आया है ?

मीटिंग में बुलाने।

किसे ?

कमला को।

क्यों ?

क्यों, सुरेशजी चाहते हैं।

भला कमला में क्या है ?

सुन्दर युवती है। और सुरेशजी उसे चाहते हैं !

मक्कार। छलिया। ढोंगी। कैसा भोला बनता है।

और यह स्त्री !

अभिमान से भरी विष की पुतली।

अहसान तो किसी का लेती ही नहीं।

क्या समझती है यह अपने को !

परमेश्वर कुछ है ही नहीं ! ऐसा व्यवहार करती है जैसे परमेश्वर एक वालन्टियर है।

मैं इतना गया बीता हूँ कि सुरेश मेरी आड़ में खेल खेले और मैं समझ तक न पाऊँ ?

क्या करूँ अब कि सुरेश की चाल खाली जाये !

इसे न ले जाऊँ। यह सभा मीटिंग···यही तो सुरेश और कमला के मिलने के बहाने होंगे ! और यह वहाँ नहीं गई तो? तो सुरेश मेरी तरह इसके घर तक तो नहीं आसकता। उससे कह दूँगा कि बे पढ़े लिखे लोग हैं। मैं धीरे-धीरे हिम्मत बँधा रहा हूँ।

वह धीमे से मुस्करा दिया। नीलिमा ने देखा तो स्वयं भी मुस्करा दी। परमेश्वर के पाँव में काँटा लगा, मगर 'उई माँ' निकली नीलिमा के मुँह से !!

परमेश्वर इस विचार से बहुत ही प्रसन्न हो उठा। उसने कहा: तो फिर मैं चलता हूँ। लेकिन मैं आप लोगों को छोड़ूँगा नहीं। आज तो आप लोग चलेंगी भी तो शायद तब तक मीटिंग ही समाप्त हो जायेगी। अच्छा नमस्ते। माताजी ?

मैं फिर आऊँगा।

परमेश्वर के जाने पर घर में एक तनाव सा फिर पैदा होगया। वृद्धा मन्दिर चली गई। खाना बनाकर कमला कुछ देर को जी बहलाने मुन्नू को लाने के बहाने शीला के घर चली गई। जब कोई घंटे भर बाद वह लौटी, उसने देखा सास आगई है और एक आदमी की भी आवाज़ सुनाई देरही है।

कमला ने देखा तो एकबार तो आँखें आश्चर्य से फटी रह गईं और फिर अपने भाई को उदास सा बैठा देखकर उसके गले से एक रोने की आवाज सहसा ही फूट पड़ी। श्यामलाल खड़ा होगया और कमला 'भैया! भैया! मेरे बीर; कहती हुई उससे लिपटकर फूट फूट कर रोने लगी। आज ही तो वह आया था! तब ही नहीं आया, जब वह विधवा हुई थी। उसके रोने में परंपरा का रूखापन और कृत्रिमता नहीं थी बल्कि हृदय की कसकती पीड़ा मानों साकार होकर बह उठी थी। वृद्धा काफी देर तक चुप बैठी रही। नीलिमा कभी माँ को देखती, कभी इनको। मुन्नू शीला के घर था।

'मत रो बहन,' श्यामलाल ने थके हुए स्वर से कहा: 'मत रो। होनी को कोई नहीं रोक पाता।'

वृद्धा ने आँखों के कोने पोंछ लिये।

कमला सिसकती हुई सूनी दृष्टि से देखती पास ही धरती पर बैठ गई। कुछ देर शाँति छाई रही। तब कमला ने धीरे से कहा: 'क्या गाँव से सीधे आरहे हो भैया ?'

'हाँ, सीधा ही आरहा हूँ!'

'भाभी तो ठीक है ?'

'ठीक क्या है ? पूरब जनम के पाप हैं । जब से आई, तब से सुख ही क्या दिया, आज यह हालत करदी। लोग कहते हैं श्यामलाल कमीना है, रिश्वती है, पर मैंने जो-कुछ किया इसीं के लिये किया। इतनी दवादारू उठती है कि पूछो नहीं। मैं तो कहीं का न रहा। सब छोड़ कर भाग जाता, पर क्या करूँ ? दोनों बच्चे अभी बहुत छोटे छोटे हैं । वे किसके सहारे जियेंगे।'

श्यामलाल के स्वर से कड़ुआहट फैल गई। कमला का मन आशंका से दहल उठा। वृद्धा ऐसी बैठी थी जैसे उसका चेहरा मोम होगया था।

'कुछ इंतजाम हुआ ?' कमला ने उत्सुकता से पूछा।

श्यामलाल ने निराश दृष्टि से ऊपर देखा, वहाँ, जहाँ शताब्दियों से वेदना द्वार खोजती रही है। परन्तु वहाँ था ही क्या ? उसने धीरे से कहा: 'कुछ नहीं।'

फिर उसने रुक कर कहा: 'मैंने समधिन जी को सब बता दिया है कम्मो ! पता नहीं क्या होगा। मैं तो मर चुका हूँ। जिसने बहन से माँग लिया, वह तो जीता हुआ भी लोथ ही है कम्मो ! अगर दो तीन दिन में राज का रुपया न भरा गया तो मेरी जेल हो जायेगी, घर कुड़क हो जायेगा, और कलेस की जड़ तेरी भाभी तो शायद इसलिये नहीं मरेगी कि उसे तो अपने पाप शायद गिन गिन कर भुगतने हैं, लेकिन वे दोनों फूल से बच्चे भूखे तड़प तड़प कर मर जायेंगे। अब मैं तुझसे क्या कहूँ ! जिस घर में रोटी नहीं खा सकता, जहाँ का पानी पीना मेरे लिये अधरम है, आज मैं वहाँ भीख

माँगने आया हूँ।'

श्यामलाल की यंत्रणा ऐसी लगी जैसे असह्य थी। उसने मुँह ढँक कर हाथों की कुहनियों को घुटनों पर टेक लिया। कमला की आँखों के आगे अँधेरा छागया। उसने खाट के पाये पर सिर टेक दिया।

नीलिमा ने सामने के दालान से कहा: 'ऐसे मौके पर भी समधिनजी गहने नहीं देतीं? क्या संग ले जायेंगी?'

'ठीक कहती हो लल्ली।' श्यामलाल ने कहा: 'संग तो वे क्या ले जायेंगी, पर होने पर जो वे न भी देतीं, तो श्यामलाल छोड़ने वाला न था। अब समधाने में यही कहना बाकी था कि तीन दिन से बच्चे भूखे हैं। और मुझे कुछ खाये आज पाँचवाँ दिन है।'

कमला अब फिर फूट फूट कर रो उठी। नीलिमा संदेह भरी दृष्टि से देखने लगी। क्या पाँच दिन का भूखा आदमी भी ऐसा लग सकता है?

हठात् वृद्धा ने पसीजे स्वर से कहा: 'बहू! रोने के लिये बहुत दिन हैं, बेटा। पहले पतली खिचड़ी बना। परांठे तो लाला के पेट में गड़ जायेंगे।'

श्यामलाल को जैसे सहारा लगा। झपट कर वृद्धा के पाँव पकड़कर रोने लगा। वह पटवारी जिनके उत्थान को देखकर भारत के ग्रामदेवता अपने अपने ग्राम को छोड़कर भाग गये थे, आज उसी जात का एक आदमी निस्सहाय सा हो रहा था।

कमला का भय उसे जड़ीभूत करने लगा। कहीं सास ने मना कर दिया तो ? कहीं भैया रास्ते में ही आत्महत्या न कर डाले। उसने यह भी सुना था कि भूख से व्याकुल होकर कोई कोई आदमी तो पहले अपने घर के आश्रितों की हत्या कर डालता हैं फिर आप भी मर जाता है, क्योंकि उनका दुख देखना उसके लिये असंभव होजाता है।

इस कल्पना से ही कमला के रोंगटे खड़े होगये।

सारा चित्र उसकी आँखों के आगे घूम गया। क्या वे दोनों बच्चे···नही···नहीं···

कमला ने सास के पाँव पकड़ कर कहा: 'तुम मेरी सास नहीं हो माताजी, तुम मेरी अम्मा हो। आज वह होती, तो क्या कुछ विचार करती ?'

वृद्धा चुप बैठी रही।

नीलिमा ने कठोर स्वर से कहा: 'भाभी ! क्या करती हो ? भाई आये हैं तो क्या मरजाद छोड़ दोगी ?'

वृद्धा ने धीरे से कहा: 'श्यामलाल।'

श्यामलाल ने सिर उठाया।

'यहाँ रुपये हैं तुम्हें कैसे पता चला ?'

'माँजी। क्या भले घर में ३००) भी न होंगे ?' श्यामलाल ने कहा: 'ज्यादा भी तो नहीं हैं ऐसे ? सिर्फ एक महीने को माँगता हूँ।'

'फिर कहाँ से लादोगे ? नीलिमा ने पूछा।

'घर रहन रख दूँगा।'

'अभी क्यों नहीं कर लेते ?'

'मुझे मजबूर जानकर मुहल्ले के दुश्मनों ने भड़का दिया है सबको। कोई सौ रुपये से ज्यादा नहीं देता। कल मेरे हाथ में रुपया देखेंगे, तो वे ही जो आज मुझे जूता दिखाते हैं। मेरी जूती को तेल चिपुड़ेंगे। उन्हें जब मालूम होगा कि मेरे पीछे एक बल है। कोई है जो मेरी मुसीबत में भी मेरा है, तो श्यामलाल फिर पटवारी बनेगा और इन दुश्मनों को एकएक करके रगड़ डालेगा।'

वह साँप सा फुँकार उठा।

फिर उसने माँ की ओर देखा।

वृद्धा ने कहा : 'बहू ! जा खिचड़ी बनाले। भगवान किसी को भी ऐसा दिन न दिखाये। लाला ! तुम जानते हो। यहाँ भी कोई कमेरा...।

'समधिन जी ! बखत की वलिहारी है। पक्का कागज लिखूँगा। भगवान और अपने कुटुम्वी। दो ही का जग में सहारा होता है। क्यों ? क्योंकि द तो अपने को ही आता है।'

श्यामलाल ने अपने सिर के बाल नोंचकर कहा: 'ले सुन ले श्यामलाल ! गरीब का कोई भरोसा भी नहीं करता। भरोसा आदमी का नहीं, दुनियाँ में पैसे का किया जाता है।'

'नहीं।' वृद्धा ने कहा: 'ऐसा न कहो लाला ! नीलू जिस लिये मरा, वह पैसे के लोभ का मारग नहीं था। मैं नहीं समझती कुछ, तुम लोगों की तरह पढ़ी भी नहीं हूँ, पर इतना

जानती हूँ कि वह बहुत अच्छे मन का था, पराई बिथा समझता था। वह मेरी कोख से जन्मा था। यह मेरा संस्कार ही था। उसे कमला सी सुसील बहू मिली। मैं गुस्सा करती थी कि क्यों नीलू औरों की तरह नहीं चलता, क्यों कमला उसे नहीं रोकती ! पर कमला ने मुझे माँ की सी इज्जत दी है। तू इसका भैया है ! रुपया मैं तुझे दूँगी नहीं······

दोनों भाई बहन चौंक उठे। नीलिमा मुस्करा गई। किंतु वृद्धा ने पुकारा: 'मुन्नू ! बेटा !'

'शीला के गया है।' नीलिमा ने कहा।

'बुला के तो ला,' वृद्धा ने फिर कहा।

नीलिमा उसे ले आई।

'देख बेटा !' वृद्धा ने कहा : 'पाँव छू ! तेरे मामा आये हैं।'

'अभी से क्यों अम्मा !' नीलिमा ने कहा—'जब जनेऊ हो जाये तब से पाँव छुलवाना !'

'तू छू तो !' वृद्धा ने कहा।

बालक ने पाँव छुए। श्यामलाल ने उसे चूम कर छाती से लगा लिया।

'लाला ! तुम्हारा भान्जा है न ?'

'हाँ।' भर्राये स्वर से उसने कहा।

'तुम्हारा कौन हुआ ?'

श्यामलाल समझा नहीं।

'पूछती हूँ, कौन हुआ ?'

'भान्जा।'

'बच्चा नहीं ?'

'बच्चा नहीं, बल्कि बेटा।'

'तो ठीक है, यही तुम्हारा बौहरा है। यही तुम्हें करज देगा। इसी के लिये हमारा रुपया है। यह अबोध दूध है, परमात्मा है, जो इसे छले सो ऐसा पाप करे कि नरक उसको छोटे पड़ जायें। इसके सिर पर हाथ धर कर दो तिरवाचे भरो। एक कि इसका रुपया दोगे और दूसरे कि सूद में इसकी हिफाजत देख रेख करोगे।

श्यामलाल ने तुरंत तिरवाचे भरे।

कमला का मन बल्लियों उछलने लगा। नीलिमा अवाक् सी देखती रह गई। इसकी उसने कल्पना भी न की थी। वृद्धा ने फिर कहा: 'लाला! कागज नहीं लिखवाऊँगी। मेरे परनाना गाँव भर के बौहरे थे, पर कभी उधार देकर अंगूठा भी नहीं टिकवाते थे। वह दिन अब नहीं रहे, पर कलयुग कहीं न कहीं हरता ही है। यह बालक गोपाल है, इसका ध्यान करना। जो तुम खाओगे वही यह भी खालेगा। मेरी एक ही साध है कि इसे पढ़ा-लिखाकर ठीक वैसा ही कर देना जैसा मेरा नीलू था।'

वृद्धा ने कपड़े का छोर मुँह पर रख लिया।

श्यामलाल ने पुकारा: 'अम्मा! तुम देवी हो!'

कमला की आँखें आश्चर्य और आनन्द से फटी रह गईं।

नीलिमा ने अनुभव किया, वही एक पराई थी।

'जा बहू! रुपये ले आ।'

'चाबी दे दो।'

जिस वक्त तीन सौ रुपये वृद्धा ने ले लिये उसने मुन्नू के हाथ में देकर कहा: 'देदे बेटा मामा को।'

मुन्नू ने हिलकते हुए हाथ बढ़ा दिया।

श्यामलाल ने चौड़ा पंजा फैला कर नोट लेलिये और फिर मुन्नू का हाथ छोड़ दिया।

नीलिमा ऊपर चली गई। उसके सिर में दर्द होने लगा था।

जब कमला ने पुकारा: 'बीबी! खाना तो खालो! नीलिमा ने बड़बड़ा कर कहा: 'तुम खालो। मेरे सिर में दर्द होरहा है।'

कमला ने वृद्धा की ओर देखा, परन्तु वृद्धा ने जैसे सुन कर भी नहीं सुना था। वह जानती थी नीलिमा काफी नाराज़ होगई थी।

सुकरात का वारिस यानी सुपना और झूँठ

नीलिमा के पति का असली नाम दुर्गापरसाद था, पर चूंकि वह कद का बहुत नाटा था इसलिये उसका प्रतापी नाम पड़ गया था—गुट्टा जी। यार दोस्त कहते थे—गुट्टाप्यारे। परन्तु दुर्गा परसाद कभी चिढ़कर चहकता नजर नहीं आया। वह सब-कुछ सुनकर मुस्करा कर रह जाता था। इतना विनम्र आदमी था कि दूसरों को भी उस पर नाराज होते हुए शर्म आती थी। क्लर्क था और तंगहाथ भी। भवसागर की लहरों को बहुत खेता था मगर उसके हाथ में घोंघे आते थे, मोती भी आयेगा इसका उसे विश्वास ही नहीं था। अरमान आसमान तक के थे, मगर जमीन का शिकंजा उन्हें निचोड़ कर धूल में मिलाये देता था। वह शख्स तीस रुपये में घर-खर्च चलाता था, तीस फ़ी माह बचाया करता था। भगवान की एक ही दया थी कि घरखर्च नही बढ़ा था यानी कि शादी के आठ साल बीत जाने पर भी पुत्र नहीं हुआ था। नीलिमा इसलिये पागल थी, और गुट्टाजी उतने ही खुश। वह पीर की मनौती मानती, काला गंडा बाँधती, तावीज बनवाती, गहने की जगह जड़ीबूटियाँ मराठियों से खरीदती जो बंजारों से आते, और गुट्टाजी खुश थे कि इन बेवकूफियों में लगी हुई पत्नी खर्चा नहीं मांगती। बच्चे उन्हें पसंद न थे, स्त्री आव-

श्यक थी। परन्तु वे उन पड़ोसिनों को भूल गये थे जिन्होंने बातों में ही नीलिमा को समझा दिया था कि कभी कभी आदमी के दोस से ही स्त्री बाँझ रह जाती है। और स्त्री के लिये बाँझ होना बड़ी साँसत होती है, क्योंकि प्रकृति ने जहाँ मनुष्यों को हजार निर्बलताएँ दी हैं, यह भी दी है। संसार के बड़े से बड़े विजेता को किसी देश को जीत कर या कलाकार को कलाकृति को जन्म देकर, वह प्रसन्नता नहीं होती, जितनी अदना सी अदना औरत को माँ बनकर होती है। माँ बनते ही औरत अपने को बहुत ऊँचा समझने लगती है। इसलिये नीलिमा चिड़चिड़ी थी। पहले वह सारा दोष अपना समझ कर गुलाम बनी रहती थी, मगर अब वह पुत्रहीन वैवाहिक जीवन के जूए के नीचे अक्खा बैल की तरह पति रूपी किसान को देख कर इँठती थी।

दुर्गा परसाद ने चरन छुए, आशीष पाई, घर में रोना हुआ, दुर्गापरसाद ने निर्गुण और सगुण सन्तों के उपदेश दूसरे की मौत पर बड़ी गँभीरता से दुहराये और अन्त में छोटे ताल का पानी स्थिर होगया।

वृद्धा ने कहा: 'लाला आगये, बड़ा खयाल किया।'

सिर झुकाये गुट्टाजी ने छोटी छोटी आँखें चमकाईं और छोटी सी तोंद को जरा आगे करके कहा: 'इसमें क्या अहसान है माँजी! बखत पर तो आये नहीं हम, हमारा मुँह ही क्या?' फिर बड़बड़ाये: पहले आती थी हाले दिल पै हँसी,

अब किसी बात पर नहीं आती।

फिर ऐसे मुस्कराये जैसे उनकी बटेर लड़ते लड़ते भागते समय अचानक झपट कर दुश्मन-बटेर को हरा बैठी और वे जीत गये थे। फ़िर कहा: 'अब आप जो हुक्म देंगी वह मैं और पूरा करूँगा।'

लाला का उत्तर सुनकर सास प्रसन्न हो उठी। उसके बुझे हुए चेहरे पर क्षीण मुस्कान दिखाई दी। उसने कहा: 'एक तकलीफ देने बुलाया है तुम्हें।'

'एक क्यों माजी! दो दीजिये दो।' दुर्गापरसाद ने मुस्करा कर कहा। नीलिमा माथे तक ढँके, पीछे खड़ी थी। मन ही मन निहाल हुई जारही थी। यह छोटा सा आदमी उसके गैया जैसे अस्तित्व का खूंटा था, जिसके सहारे बंधी वह आराम से पगुरा रही थी। कमला पास बैठी थी। मुन्नू उसकी गोद में था।

वृद्धा ने कहा: 'तुम्हें तो पता ही है हमारे दुख-दर्द के कारण लोगों ने चन्दा इकट्ठा करके दिया है?'

दामाद ने कहा: 'मुझे क्या ख़बर माँजी! मुझसे कौन सी राय ली जाती है?'

कमला ने सिर नीचे करके कहा: 'आपको फ़ुर्सत ही कहाँ थी!'

उसकी धीमी आवाज में भी व्यंग था।

वृद्धा ने कहा: 'अब यह सब लेकर क्या करना है बहू! मतलब की बात करो। लाला क्या काम न आयेंगे?'

'मैं कब मना करता हूँ माँजी।'

'तो तू कह नीलिमा ?'

'अम्मा तुम कहो । भाभी कहें । मुझ से क्यों कहलाती हो ?'

'अरे लाला क्या नहीं समझे ?'

'समझूँगा क्या ? मुझे तो लिखा था । रुपयों की बात है । अम्मा ने कहा है लाला को फ़ौरन बुलाओ । कहो नौकरी छोड़ आयें । मैंने मैनेजर को दिखा दिया खत ! बंक की नौकरी ठहरी । दम मारने की फ़ुर्सत नहीं । लाखों किड़ोड़ों का हेर-फेर मगर अपना कुछ नहीं, जैसे हज़ार मोटरों के बीच चौराहे का सिपाही । मैनेजर ने देखा और बोला : अच्छी बात है तनखा के बिना जा सकते हो, अंधेर है मां जी !'

यों गुट्टाजी ने तवे पर सेंककर गर्व से रोटी नीचे फेंकी, मगर कमला ने उठाकर आग में दे दी । एक पर्त्त की दो हो गईं, उल्टे बीच में जाने कहाँ से हवा आ घुसी । बोली : 'क्यों नहीं ! पेट के लिये क्या न करना पड़े लालाजी ! आप तो जानै ही हैं । जब मर्दों का ये हाल है तो औरतों की तो बिसात ही क्या ।'

'भगवान बचाये !' वृद्धा ने लंबी उसाँस ली ।

गुट्टाजी की गोटी चित्त पड़ी । समझ गये कमला बड़ी गरूर वाली है । पर मन ने कहा : औरत की जात! और स्वर उठाकर बोले : 'हाँ हाँ, आप ठीक कहती हैं माँजी, बड़ा बुरा जमाना आ गया है । एक रत्ती भर भी झूठ नहीं है इसमें । हम तो रात-दिन देखते हैं ।'

'अब तुम्हारा ही सहारा है,' वृद्धा ने कहा : 'कुछ भले

आदमियों ने रुपया इकट्ठा किया है। १९२०) दिये हैं। भइया ! इनको बंक में धरदो ले जाके। मेरा क्या ठिकाना। आज हूँ कल नहीं। बहू के नाम जमा करा दो।'

'रुपयों की बात है !' गुट्टाजी ने सोचते हुए कहा : 'रुपयों की तो कोई बात नहीं, मगर मेरे संग आप चलेंगी ?'

'क्यों ?

'रुपया माँजी ! झगड़े की जड़ है। इसमें भला करते में नाम जाये दूर ! काजर पारो, लगवाने वाले की आँखों में जादू, लगाने वाले के हाथ काले !'

'अरे तो क्या इतना भी विश्वास नहीं बेटा !' वृद्धा ने कहा : 'क्या कहते हो ?'

'तो आप चलिये ?'

कमला ने कहा : 'अब मैं क्या बंक जाती भली लगूँगी, आप ही चले जायें न ?'

नीलिमा ने कहा : 'इतना क्या पराया समझा है ? किसी का काम कर देने में घट न जायेंगे। आप ही चले जायें न ?'

दबी आवाज़।

गुट्टाजी ने कहा : 'अरे तुमने दुनिया क्या देखी है। कल को और नहीं तो पड़ौसी भड़कायेंगे। माँजी बुरा न मानना, मगर सचाई कहे बिना मुझसे नहीं रहा जाता। झूँठ से मुझसे छत्तीस का अंकेन का रिश्ता है। हाँ, कहे देता हूँ। औरतों के कान कच्चे होते हैं।'

'भइया हम कहें तब न मानोगे ?' वृद्धा ने कहा : 'पहले यह काम कर आओ !'

गुप्ता जी ने लापरवाह मुद्रा में कहा : 'बात ही ऐसी क्या है ! किरोड़ीलाल के माँजी इन्हीं हाथों ने ७७ हज्जार रुपये बंक में ऐसे डलवाये जैसे बंबे में चिट्ठी डालदी हो। हाँ, मिन्टों का काम है। रकम ही कितनी है। यों ही जमा हो जायेगी। योंही। कौनसी बंक में करादूँ ?'

वृद्धा ने कहा : 'तुम जिसे ठीक समझो वहीं करो।' फिर कहा : 'भइया ! बस रुपया डूब न जाये ! नहीं तो समझलो नैया मँझधार में डूब जायेगी।'

'हैंहैं, रुपये कैसे डूब जायेंगे !' गुप्ताजी ने कहा—'सरकारी मामला है। कोई निकाल थोड़े ही सकेगा। अजी खुद निकालने जाओ तो तीन आदमियों से तो वह दस्तखत मिलवायेगा तब कहीं देगा। सबेरे गया संझा को लौटेगा आदमी ! तो अब जल्दी करो।'

'बहू ! रुपये ले आ।'

बहू ने रुपये लाकर दिये। गड्डी की गड्डी। दुर्गा परसाद ने गिने और चौंक के बोले : 'धरती खा गई ! कि भूत आगया !'

फिर तेजी से गिनने लगे।

'अरे कम होंगे।' नीलिमा ने कहा।

'सो ही तो कहूँ। जो बिना गिने ले लिये होते तो आज तो हम कहीं मुँह दिखाने के न रहते ! तुमने भी न कहा। आखिर पाप का ठहरा !'

'हाय। मुझे क्या कहते हो ! मुझसे पूछा भी था !'

'तीन सौ कम लगते हैं, फिर गिनूँ ?'

'हाँ कम हैं', वृद्धा ने कहा ।

'खरच भी कर डाले इतनी जल्दी ?'

'नहीं बेटा ! बात और हुई ।' वृद्धा कुछ झिझकी ।

'अब अम्मा,' नीलिमा ने कहा : 'अपना भी कहती हो, पराया भी । कहती-कहती क्यों रुक गईं ? वे क्या किसी से कहेंगे ? रात को कहती थीं, जब शीला ने कहा था कि बंक में रुपयों का ब्याज मिलेगा, कि लाला आयेंगे तो उनको संग लेके हरद्वार जाऊँगी, और अब यों चौका अलग कर रही हो !'

वृद्धा सकपका गई । कमला स्तब्ध रही । नीलिमा ने कहा:'जाने दो जी ! आप भले । जग भला । किसी के मन से हमें क्या । हमें तो भला करना ।'

गुट्टाजी ने कहा : 'नेकी कर दरिया में डाल ।'

और सिर हिलाया ।

नीलिमा ने कहा : 'अरे हमें क्या लेना देना है । तुम जानके भी क्या करोगे कि भाभी के भैयाजी आये थे । वे ही ३००) ले गये माँग के । भाभी छिपायें तो ठीक । अम्मा तुम्हें क्या हो गया ?'

'उधार ले गया है ।' वृद्धा ने कहा ।

दुर्गा परसाद पैनी छुरी की तरह चमकती मुस्कान होठों पर निकाल लाये और बोले : 'माँजी ने तो बौहरगत भी शुरू कर दी । भगवान ने हमें बहन न दी । हम भी सूराग़ लगा ही लेते । मिली भी तो यह खर्चीली बीबी ।'

वे फिर मुस्कराये ।

'हाय मुझे ही कहते हो उल्टे !' नीलिमा ने डाँटा। धीरे से पूछा : 'कुछ लिखा-पढ़ी भी कराई है ?'

'नहीं बेटा !'

गुट्टाजी ने मुँह खोला और ऐसे बंद कर लिया जैसे हमें क्या ?

कमला का चेहरा स्याह पड़ गया। वृद्धा चिन्ता में पड़ गई। नीलिमा के मुख पर गर्व था।

'भाई बहन की सुसराल से ले गया तो हमें क्या ?' गुट्टाजी ने उठते हुए कहा।

कोई न बोला। गुट्टा जी ने कहा : 'तो मैं बंक जाता हूँ। शाम की गाड़ी से ही लौटूँगा।'

'यह कैसे होगा ?' नीलिमा ने कहा।

'क्यों ?'

'अम्मा को हरद्वार न ले जाओगे ? मैंने तो तुम्हारी तरफ से वचन दे दिया है !'

गुट्टाजी ऐसे लगे जैसे मर गये। फिर बोले : 'घुटना पेट को ही मुड़ता है। वहाँ नौकरी चली गई तो।'

'तो रहने दो बेटा। वृद्धा ने कहा।

'नहीं माँजी ! ऐसा कैसे हो सकता है ?' गुट्टाजी ने रकम जेब के भीतर रखकर कहा—'नौकरी चली जाये, आपका काम न छोड़ूंगा। वह तो मैं इसे डाँटता था। आप तैयार रहें। संझा की गाड़ी से चलेंगे। मैं बंक को तार दे दूँगा। छुट्टी बढ़ा दो। न बढ़ायेंगे, भगवान और देगा !'

इतने विशाल हृदय को देखकर कमला तो लज्जा के कारण पानी-पानी हो गई।

फिर गुप्ता जी ने कहा : 'मेरी तो सरहज हो। मेरा तुम्हारा तो मजाक का रिश्ता है, पर भगवान ने यह विपदा डाल दी। पर बुरा न मानना। अपने पराये की पहँचान रखो और तुम्हें मैं क्या कहूँ ?

'लालाजी ! सोचती तो हूँ, पर अकल जित्ती है उत्ती ही तो चलेगी !' कमला ने दबी बिल्ली, चूहे से कान कटाये वाले स्वर में कहा।

'खाना खाते जाना लाला।'

'अजी राम भजो ! मुझे पहले काम किये बिना रोटी न भायेगी। बंक का काम। घंटों खड़ा रहना पड़ेगा।'

गुप्ताजी ने उतावली दिखाते हुये कहा।

जब वह चला गया तो वृद्धा की सामान बँधवाने की अटर-सटर शुरू हो गई।

दुपहर तक खाना भी बन गया, माँ ने खाया, बच्चे ने, नीलिमा पति की प्रतीक्षा में थी, कमला नीलिमा के बुरा मान जाने के डर से भूखी थी। गुप्ताजी न आये। एक बज गया चिन्ता होने लगी।

दो बजे के करीब कमला ने दबी ज़बान से कहा : 'बीबी ! खाना खालो।'

'अभी से ?' नीलिमा ने कहा।

वृद्धा ने बगल के कमरे से सुना तो पूछा : 'अरी खाय क्यों नहीं ?'

'लालाजी अभी तक न आये माताजी !' कमला ने कहा ।

नीलिमा एकदम फट पड़ी ! 'भाभी ! ऐसी क्यों घबराई जाती हो । औरतों वाली बात न करो । सभा समाज बंक में तो देर लगती ही होगी । मर्दों के हजार काम । घर बैठे की शीरनी नहीं है जो ! तुम्हारे रुपये ले न जायेंगे वे !'

कमला सकते में पड़ गई । क्या कहे । बोली : 'बीबी ! मैंने यह थोड़े ही कहा था । तुम तो बुरा मान गईं ?'

इसी समय परमेश्वर ने पुकारा : माताजी !

'आओ बेटा !' वृद्धा ने कहा ।

परमेश्वर से वृद्धा ने कहा : 'तेरे जीजा आये हैं बेटा !'

परमेश्वर मुस्कराया जैसे प्रसन्न हो गया । तो नीलिमा जा रही है ! कमला अकेली रहेगी !

बोला : अम्मा ! इस बखत तो मैं जल्दी में हूँ । हाँ, जरूर मिलता । पर क्या करूँ । स्त्री संघ का काम है न ? मैं कहने आया था जो भाभी और बहन थोड़ी पढ़लें अँगरेजी और हिन्दी भी जरा ज्यादा तो ठीक रहे !'

'अरे हाँ !' कमला ने कहा : 'अब बूढ़े तोते पढ़ेंगे !'

'अरे पढ़ क्यों नहीं सकते ?' नीलिमा ने कहा—'ब्याह के पहले न पढ़ा मैंने, अब तो मन करता है खूब पढ़ूँ, खूब पढ़ूँ । सोच के देखती हूँ । औरत न पढ़ी तो खराब है उसकी जिन्दगी !'

उसकी बात सुनकर कमला ऐसी चौंकी जैसे सूरज पश्चिम से उगा । वृद्धा को लगा धरती हिल गई ।

'सच कहती हूँ ।' नीलिमा ने कहा : 'हम तीन जनी हैं ।

आज जीजा आये हैं तुम्हारे परमेश्वर भइया ! रुपये, वो तुमने जमा कराये थे न ? बंक में जमा कराने। जो पढ़ीं होतीं हम तो, क्यों वे तकलीफ़ पाते। इत्ता बखत हो गया। दाना नहीं गया उनके मुँह में। भाभो पढ़लें, अम्मा ! तुम हरद्वार जा रही हो, कह दो इनसे। भाभी को पढ़ा दें। बेचारे खुद आने को कहते हैं। अब क्या मैं तो पढ़ूँगी। तुम लौटी और मै गई।'

'तुम भी पढ़ लो बीबी।' कमला ने व्यंग्य किया। 'मैं कैसे पढ़ूँगी ? शीला कहती थी मेरे घर आके दिन में कढ़ाई का काम कर जाया करो। रुपया आठ आना रोज मिल जायेगा। वह करूँ कि यह करूँ ?'

'अम्मा से पूछा तुमने ?'

माँ ने कहा : 'कल शीला ने ही कहा था। काम में तो हरज नहीं।'

परमेश्वर आखड़ा हुआ। बोला : 'कल आऊँगा। तय करूँगा। अम्मा कितने दिन में लौटेंगी ?'

'बस गई और आई बेटा ! तुम दो दिन देखो तो सही। यह पढ़ भी सकें ? इनमें है भी अकल। नीलिमा की तो पढ़ाई शौक है। पर कमला को तो बहुत काम देगी। अभी तो मुन्नू को बड़े होने में कई बरस हैं। कल को मैं न रही !'

परमेश्वर का मन आधा बुझ गया था कि नीलिमा नहीं जारही है अभी। पर जब वह चला तो नीलिमा की आँखों का रस उसके भीतर इतने ऊपर से उतरा जैसे दूर से कुल्हड़ पकड़ कर हलवाई गज़ भर की दूध की धार छोड़ देता है।

वह चला गया।

तीन बजे गुट्टाजी लौटे तो थके हुए थे। आते ही चेकबुक वृद्धा के सामने डालदी।

'ये लो माँजी! आफत कटी। जमा होगये। सेविंग्ज एकाउन्ट है। करन्ट में व्याज नहीं जुड़ता, कटती है रकम। इसमें जुड़ता रहेगा। देखलो।'

वृद्धा ने उलट पुलट कर देखी। फिर कहा: 'देख तो बहू!'

'नीलिमा ने व्यंग्य किया—'भाभी ज़रा मुझे भी सुना देना। मुझे अंगरेजी नहीं आती।'

कमला पीगई! कहा: 'अब ६ महीने ठहर जाओ बीबी। तब पढ़ लूंगी।'

'इसे मुझे देदो।' गुट्टाजी ने कहा: 'यह खोगई तो रुपया गुम समझो। रुपया निकालने जाओ तो मेरी गवाही से निकलेंगे। समझी माँजी। कोई देखें और कैसे निकाल ले जाये!'

गुट्टाजी ने चेकबुक लेली और कहा: 'सामान तैयार है? चलो माँजी। स्टेशन!'

'अरे खाना तो खालो बेटा!' वृद्धा ने कहा—'मुझे चैन आया। मेरी मुसीबत कटी। अब कोई डर नहीं। नीलकांत नहीं है, पर तुम भी तो मेरे ही हो। तुम्हारा ही तो सहारा है। नीलिमा बेटी! बात बात पर नाराज न हुआ कर।'

'मैं कहाँ होती हूँ अम्मा!'

साँझ आगई। ताँगा सास दामाद को लेकर चला गया। मुन्नू और कमला बैठ गये। नीलिमा लेटी थी।

मुन्नू ने कहा : 'माँ! शशि के पास हो आऊँ?'

'अब जायेगा?'

'हाँ माँ।'

'बुआ से पूछ!'

नीलिमा ने कहा: 'अब मुझसे क्या पुछाती हो भाभी! हो आओ न? मन तो तुम्हारा कर रहा है। कल ही से कसीदा कढ़ाई का काम करोगी?'

'हाँ बीबी।'

'कब जाओगी?'

'दुपहर में।'

नीलिमा ने आँखें मूँद कर कहा—'किवाड़ मूँद जाना। जल्दी आजाना।'

दूसरे दिन जब दुपहर ढले शीला के घर से कमला लौटी और मुन्नू उसकी साड़ी का छोर छोड़ कर मटकूचर सा बैठ कर रोटी खाने लगा, कमला ने कहा : 'बीबी! मैं तो नया काम सीखने में भूल ही गई। परमेश्वर भाई आये थे?'

'हाँ', नीलिमा ने कहा : 'आये मैंने कहा : बैठो! भाभी आती होंगी! दस पन्द्रह मिनट बैठे भी, पर तुम न आईं तो चले गये।'

कमला के जीवन में नया अध्याय खुला था। स्वावलंबन की आशा में ही बड़ा बल होता है। बेकार जिंदगी भी काम

की नजर आने लगती है ।

बोली: 'बीबी ! मुझे बुला क्यों न लिया ?'

'किसे भेजकर बुलाती ?'

'मुन्नू को कल से छोड़ जाऊँगी ।'

'रहने दो, रहने दो !' नीलिमा ने कहा: 'मेरे पास न रहेगा ये शैतान। न बैठने देगा, न सोने देगा । जरा छुऊँगी तो बुक्का फाड़कर रोयेगा। इसे तो तुम ही संग रखो ।'

'तो फिर कैसे होगी ?'

नीलिमा ने कहा : 'अब तुम कितने काम कर लोगी भाभी ! पढ़ भी लोगी, कसीदा भी कर लोगी ! घर का काम है ही ! पता नहीं, कैसे कर लोगी सब !'

कमला हँस दी। कहा: 'देखो बीबी । जो होजाये वही है। डूबता हर तिनके को किनारा समझै ।'

'ओह हो ! ऐसी काहे में डूबी जारही हो ?'

कमला ने आश्चर्य से देखा जैसे क्या कहती हो ? अब डूबने में कसर ही क्या हैं ? परन्तु बोली नहीं।

आग की लपट चूल्हे में काँपती रही 'मुन्नू ने कहा—'माँ जरा दाल देना ।'

कमला का ध्यान छिटका ।

बोली: 'बीबी ! माता जी ने हरद्वार में अब तक तो गंगा न्हान कर लिया होगा । बड़ी आस थी मन में । कभी मौका लगा तो मैं भी जाऊँगी । माताजी हमेशा उनसे कहा करती थीं । मुन्नू बड़ा होजायेगा तब जाऊँगी मैं !'

'अम्मा को एक भैया लेगए थे, एक मुन्नू तुम्हें ले

जायेगा !' नीलिमा ने कठोरता से कहा और स्वर बढ़ाया : 'जरा बूरा देना भाभी !'

कमला आहत हो गई । नीलिमा ने इतनी क्रूर कल्पना खड़ी करदो थी कि वह मन ही मन काँप उठी, उसने धीमे से कहा: 'क्या कहती हो बीबी !'

'अरे हाय ! मैने क्या कह दिया ! रहने दो, बूरा रहने दो बस !'

कमला उस आक्रमण से विक्षुब्ध होगई । उसने बूरे का डिब्बा सामने रख दिया और फिर मुँह फेर कर आँसू पोंछे और बात बंद करदी । नीलिमा ने कोई चिंता नहीं की ।

कमला की रात एक निबिड़ उद्विग्नता में व्यतीत हुई । नीलिमा के प्रति मन अत्यन्त तिक्त होगया था ।

सबेरे पूछा: 'बीबी ! परमेश्वर भाई जो आयें तो कह देना मैं पढ़ नहीं सकूंगी । न आया करें ।'

नीलिमा ने व्यंग से कहा : 'अच्छी बात है । मेरा क्या ? कह दूंगी। शीला के यहा मजा रहता है, सो यहाँ कहाँ मिलेगा ?'

'क्या कहती हो ?' कमला ने आँखें कुञ्चित करके विषाक्त स्वर से पूछा ।

'तो पढ़ना नहीं चाहती न ? मत पढ़ो । अरे एक भला आदमी है, वह खुद कह रहा है न ? इसलिये उसकी कदर नहीं । भाभी । वह आदमी नहीं हीरा है ।'

कमला क्या कहती । कहा दबी आवाज़ में : 'पर मैं आ

कैसे सकती हूँ ?'

'आज मैं कह दूँगी भाई से ।'

'मैं आजाऊँगी दुपहर ही ।'

नीलिमा ने सोचते हुए कहा: 'ऐसी आजाओगी न चार बजे तक । तभी तक वह आयेंगे ।

कमला सन्तुष्ट होगई ।

शीला प्रसन्नचित्त रहने वाली सहृदय स्त्री थी । जब उसने सुना कि कमला पढ़ना सीखेगी तो पूछा: 'यह परमेश्वर आदमी कैसा है बहन ।'

'भला आदमी है ।'

उसके लिये काफ़ी था ।

साढ़े तीन बजने को आये । कमला ने कहा : 'मुन्नूबेटा ! एक काम करेगा ?'

'बोल माँ ।'

'जा देख आ ! तेरे परमेश्वर चाचा आगये या नहीं ।'

'अभी लो ।'

'किनारे किनारे जाना । हाँ ?'

मुन्नू चला गया । जब वह लौटा शीला चाय बनाने रसोई में चली गई थी ।

'आगये ?' कमला ने पूछा ।

'बैठे हैं भीतर !' मुन्नू ने कहा । बुआ भी वहीं हैं । अम्मा ! बुआ चाचा को मिठाई खिला रहीं थीं ।'

कमला ने सोचा शायद खुशामद में । पर सहसा विचार आया ! मिठाई ! घर में तो न थी !

कुछ कौंधा, कुछ अंधेरा सा छाया। उठ खड़ी हुई। मुन्नू से कहा : 'शशि आती होगी, तू यहीं खेल। शीला बहन पूछें तो कहना कि परमेश्वर चाचा आगये हैं। बुआ ने मां को बुलवाया है।'

मुन्नू ने कहा : 'अच्छी बात है।'

जब वह घर पहुँची देखा सदर दरवाजा भीतर से बंद था। वह पौरी में ही खड़ी रह गई। भीतर से कोई आहट नहीं आ रही थी। कुछ देर में द्वार खुला। नीलिमा थी। उस स्थान पर हठात् कमला को देखकर नीलिमा का मुँह एकदम स्याह सा पड़ गया। दृढ़ दृष्टि से कमला देखती रही।

परमेश्वर आँगन में खड़ा था। उसने कहा : 'आओ भाभी रुक क्यों गईं ?'

कमला भीतर चली गई।

परमेश्वर ने कहा : 'तो कल से पढ़ोगी भाभी !'

'नहीं !' कमला का कठोर स्वर सुनाई दिया। 'मुझे फुर्सत नहीं मिलती।'

परमेश्वर ने हँसकर कहा : 'यही तो नीलिमा बहन भी कहती थीं।' मैंने कहा : 'तुम पढ़ो।' बोलीं, 'मुझे शरम लगती है, कोई पढ़ते देखेगा तो क्या कहेगा ?' मैंने कहा : 'पढ़ाई में क्या शरम।' तो बोलीं : 'ठहरो, दरवाज़ा बन्द करके पढ़ूँगी। इसीलिये दरवाज़ा बन्द कर लिया था।'

'मैंने पूछा नहीं था।' कमला ने कहा : 'मुझे यह कैफ़ियत देने की कोई जरूरत नहीं थी।'

'हाँऽऽऽ' परमेश्वर ने कहा।

'भाभी तो,' नीलिमा ने कहा—'खुले दरवाजे नहीं शरमतीं ! जाओ भइया यह तो पढ़लीं !'

परमेश्वर ने मुस्करा कर कहा : 'पढ़ाई होती ही बड़ी कठिन है। अच्छा चलूँ। नमस्ते !'

'नमस्ते। अम्मा आयेंगी तो पूछेंगी।'

कमला अपने कमरे में व्याकुल विक्षुब्ध सी घूमने लगी। किन्तु समझ में नहीं आ रहा था, क्या कहे ? नीलिमा की नीचता की सीमा का अतिक्रमण था कि जघन्यता ने भी व्यंग किया था ! इससे अधिक निर्लज्जता और क्या हो सकती थी ? परन्तु कमला किसी से कहेगी भी तो क्या ? अपनी ही नन्द है। अपना ही घर है। क्या इसमें अपना ही मान नहीं जाता। और यह परमेश्वर ! ऐसा कमीना ! किन्तु उसका भी क्या दोष ! मर्द है ही क्या जो औरत उसे बढ़ावा न दे !

उसका क्रोध मन ही मन उसे जलाने लगा। और उस समय वह समझ नहीं पाई जब नीलिमा ने आँखों में काजर पार कर आइना देखा। खाते समय कहा : 'भाभी जरा बूरा देना। घी की कटोरी इधर देना जरा।'

कमला उससे बातें किये बिना उसके सारे आदेशों का पालन करती रही। उसने सुना था कि पाप के पंख नहीं होते, पर आज उसने अनुभव किया कि उसके पाँव होते हैं, जिन्हें फैलाकर वह आराम से ऊपर ही ऊपर मँडराता है।

और नीलिमा की निश्चिंतता देखकर उसे आश्चर्य हुआ।

हठात् उसे ध्यान आया। इसके पति है, तभी कोई डर नहीं। इसकी माँ है। और कमला के पति नहीं है, इसलिये संसार में उसका कोई नहीं है।

सुहागिन के आँचल का दीपक भी उसका रूप बढ़ाता है, और विधवा को तो कोठे में दूर रखा दिया भी जलाता है।

कमला सोचने लगी। माताजी से कहूँगी। पर क्या कहेगी वह ? किन शब्दों में ? क्या वे उल्टा बुरा न मानेंगीं ? उसकी बात का विश्वास ही कौन करेगा ?

नीलिमा मस्त थी। बेफ़िकर।

जब सुबह हो गई और कमला शीला के घर जाने के विचार में न थी, नीलिमा ने कहा : 'आज तो भाभी पढ़ोगी न ? या आज भी नहीं ?'

उसकी दृढ़ता और निश्चिंतता देखकर कमला को संदेह हुआ। कहीं उसका भ्रम ही तो नहीं है ? किंतु आँखें उठाकर देखा तो विचित्र थी उसकी दृष्टि !

उसने कहा : 'हाँ यहीं रहूँगी।'

परन्तु उस दिन नीलिमा का सुपना पूरा नहीं हुआ। परमेश्वर नहीं आया। और शीला ही आकर कमला को बुला ले गई। क्या जाने, क्या कहकर मुन्नू को छोड़ गई थी कि वह चौकीदार की तरह बैठा था। नीलिमा का विक्षोभ गहरा गया। जब कमला लौटकर आई उसने देखा मुन्नू रो रहा था और नीलिमा भीतर बुड़बुड़ा रही थी।

कमला ने मुन्नू को गोद में उठा लिया और मन ही मन रसोई में जाकर मुस्करा उठी। एक विचित्र प्रतिहिंसा की

तृप्ति हुई। अभावात्मक जीवन के लिये बाध्य की गई युवती विधवा बड़ा धार्मिक रूप धारण कर लेती है क्योंकि उसकी कचोटों की उसमें तृप्ति होती रहती है, जिसके अतिरिक्त उसे और कोई मार्ग नहीं होता।

उसने खिड़की से देखा नीलिमा आँगन में आई, उसने घड़े से पानी लुटिया से गिलास में उँडेला और गटगट करके पी गई, फिर अवरुद्ध सी, फूत्कार करती हुई सी बीच आँगन में पाँव चौड़ाये सी कमर पर दोनों हाथ रखकर खड़ी होगई और तेज़ आवाज़ में बोली : 'भाभी लड़का तो खूब लड़ाका कर दिया है न ? और क्यों सिखाती हो ? उनके आते ही मैं तो चली जाऊँगी, पर ऊपर वाला बिना दण्ड दिये नहीं छोड़ता। एक तो तुम्हारे पुत्र ने जीते में खा लिया, अब दूसरे को भी तुम्हारा पुत्र खाता है कि उसका पुत्र तुम्हें तड़पाता है, यह देखना बाकी रह गया है।'

इतनी तेज़ बात पर भी कमला को क्रोध न आया। उसने आज नीलिमा को इतना छकाया था कि वह खिसिया गयी थी। धीरे से कहा : 'बीबी ! बच्चे तो ऊधम करते ही हैं। काहे गुस्सा होती हो ? भगवान चाहेगा तो अब तुम्हारे भी हो ही जायेगा ! तब देखूँगी !'

वह 'अब' ऐसी गजब की 'अब' थी कि नीलिमा उसे न सह सकी। उसने छाती पीटकर कहा : 'ओ भाभी, पाप से डरो, भरी कोख का घमंड न करो। बड़ी-बड़ियों के बगीचे मरघट समान हो गये। तुम्हारा क्या है ? एक मूस भी

नहीं है !

कमला ने कहा : 'कल अम्माजी आजायेंगी बीवी, तब उन्हीं से उनके नाती के लिये ऐसी मनौतियाँ करना। तुम्हारा भी तो भतीजा है। न हो तो, इसे ही गोद ले लो !'

नीलिमा पाँव पटकती कोठे में चली गई।

कमला की आँखों में अँधेरा छा गया।

———

अंधेरे में काला सूरज निकला और अंधी धूप छागई जिसमें झुलस कम नहीं थी।

दुर्गापरसाद जी की मुखाकृति देखकर लगता था जैसे वे विरक्त होगये थे।

नीलिमा अवाक् थी।

कमला फूट फूट कर रोरही थी।

'अब रोकर क्या होगा बहू', दुर्गापरसाद ने कहा—'आती है तो अकेली नहीं आती। काफला जोड़कर आती है।' चाक़ू ने घाव काटा।

'भाग होता है किसी किसी का।' नीलिमा ने कहा। घाव पर नमक छिड़का।

कमला ने रोते हुए कहा: 'हाय! अब मैं क्या करूँ? अम्मा! तुम भी चली गईं? अब मेरा कौन है? अब इस अभागे को कहाँ ले जाऊँ?'

सारा संसार जैसे मुंह बाये खड़ा था, निगल जाने को।

'हम तो हैं गुप्ताजी ने कहा।'

'अम्मा कहाँ गई माँ?' मुन्नू ने पूछा।

नीलिमा ने कहा: 'तू बैठ जा परमेश्वर! तेरी ही खिचड़ी पक गई है। जाने कैसे गिरह लेके आया है।'

कमला ने कहा: 'उसे न कहो बीबी। अभागिन तो

मैं हूँ !'

गुट्टाजी ने कहा: 'अब रोना ही ठीक है बहू, रो लो। रोने से जी हल्का होता है।'

उस स्वर में बड़ी आत्मीयता थी। कमला ने बड़ी याचना से उधर देखा। घूंघट सिर से गिर गया।

'सिर ढाँक लो भाभी।' नीलिमा ने कहा: 'अब कौन कहने वाला रहा।'

'छि:' गुट्टाजी ने कहा: 'क्या कहती हो तुम ? दया नहीं तुममें जरा भी। बेचारी बे-आसरा होगई है। तुम्हीं तो उसका सहारा हो, मेरी तो वह बहन बराबर है। तुम्हें तो माँ के मरने का कोई गम ही नहीं।'

कमला को लगा जैसे वह देवता था। दया उसमें कूट-कूटकर भरी थी। ऐसी पिशाचिनी का ऐसा सीधा सा पति ! और फिर वह स्त्री इससे विश्वासघात कर बैठी। और अब मुझ पर भी लाँछन। कठोर स्वर से कमला ने कहा : 'रहने दो बीवी ! मुँह न खुलवाओ ! मैं भाई बनाती हूँ तो भाई ही रहता है ! ऐसे नहीं जैसे तुमने परमेश्वर को···

नीलिमा ने दाँत पीसे। कहा : ओ कुतिया······मुझ पर ही···

परन्तु गुट्टाजी ने पूर्णप्रज्ञ की भाँति कहा : 'चुप हो जाओ दोनों। दीवारों के भी कान होते हैं। तुमने किया या बहू ने किया, जो कुछ किया, घर की बदनामी नहीं होनी चाहिये, भूल हो भी जाये तो पी जाओ। क्या मिलेगा इससे ?

अगर चाहती हो कि मैं यहाँ दिखूँ तो दोनों जीभों को रोक लो। वर्ना समझ लेना दुर्गापरसाद अभी साधू बनकर घर से निकल जायेगा।'

नीलिमा ने आँखें चला कर कहा : 'अच्छा ! अब तक सुनती जरूर थी। देखा न था। मगर यह राँड़ है। चाट जायेगी : रोआँ न उगेगा। मुझे पापन कहती है।'

परन्तु कमला ज़मीन पर लोट गई। उसने गुप्ताजी के पाँव पर सिर रखकर कहा : 'तुम आदमी नहीं हो, नन्देऊजी ! तुम देवता हो। तुम कितने बड़े हो ! तुम कितने अच्छे हो। मैं पापन हूँ। मुझे क्षमा करदो। ऐसी बात कहते मेरी जीभ क्यों न गलकर गिर पड़ी।'

नीलिमा भीतर चली गई।

'यह लो।' गुप्ताजी ने कहा : 'यह बंक के रुपयों की रसोद है। सँभालो। अब मांजी का करम है। फिर मैं चला जाऊँगा। तुम बेवा ठहरीं। करम मैं ही करूँगा। तुम कहाँ से लाओगी रुपये। नीलिमा !'

नीलिमा आई।

'क्या है ?'

'ला अपनी चूड़ियाँ मुझे दे।'

'क्यों ?'

'करम करना है न ?'

नीलिया स्तब्ध खड़ी रही।

'अरी ! तेरी तो ख़ास माँ थी। तुझे तो उसने दूध

पिलाया था !'

नीलिमा फिर भी चुप खड़ी रही ।

'उसे क्या देखती है ! बेवा है । उसे यह बच्चा भी तो पालना है । इसके घर में तो आग लग चुकी है अब उससे क्या चूल्हा जलाने को बैसांधर ले जायेगी तू ? तेरे हिये में दया नहीं है विसका नाम ?'

नीलिमा फिर भी जड़ बनी रही ।

तब गुट्टा जी ने कहा : 'सुहाग का मोल देगी कि नहीं ! पत्थर सी खड़ी है तू डाँकिन ! इस गरीब को लुटवायेगी ?'

नीलिमा ने चूड़ियाँ उतार कर फेंक दीं और फिर कोने में सिर ढँक कर बैठ गई, जैसे अब जीवन विनष्ट हो चुका था ।

गुट्टाजी ने कहा : बाजार की औरत में और फेरे डाल कर लाई औरत में यह फरक होता है । घर की औरत तब तक साथ देती है, जब तक उसमें आखिरी साँस बाकी रहती है । उसका मन बिधना के मन से भी बड़ा होता है ।

नीलिमा को सांत्वना हुई ।

कमला ने आँसू पोंछ कर कहा: 'नन्देऊजी ! अम्मा डूब कैसे गईं ? मेरी तो समझ में नहीं आता !'

'अरे बहू । डूबी कहाँ वे ! काल पाँव पकड़ कर खींच ले गया । तुमने यह रसीद नहीं उठाई ?'

'अब मैं क्या उठाऊँगी । बीबी को दे दो । मैं तो बाँदी बनके पड़ी रहूँगी । किसी तरह यह पल जाये बस ।'

उसने सुन्नू की ओर दिखाया ।

'वह तो पल ही जायेगा।' गुट्टाजी ने कहा। 'उसकी चिंता न करो।'

नीलिमा का मन अब फफक कर पिघलने लगा था।

मुहल्ले की औरतें मिल गईं। गुट्टाजी ने चूड़ियाँ बेचकर जिस लगन से करम किया उसे देखकर कमला का मन भीतर ही भीतर झुक गया। उसने ननद की आज्ञाओं को भी सिर पर उठा लिया। नीलिमा का विक्षोभ विचित्र रूप से प्यासा था, प्रतिहिंसा से लदा था, परन्तु गुट्टाजी के सामने वह दबा हुआ था।

जब शांति होगई। गुट्टाजी ने कमरे में अपना बक्स खोला। चेकबुक का पट्ठा फाड़ा और धरती पर धर कर पाँव रगड़ कर मैला किया। बाकी भीतर धर दी और पुकारा: 'नीलिमा!' बगल के कमरे से नीलिमा चुपचाप देख रही थी!

भीतर आगई।

'बहू कहाँ है?'

'रसोई में होगी।'

'अब चलना नहीं है?'

नीलिमा ने सकपकाते हुए पूछा: 'कब चलोगे?'

'अब हमारा क्या काम है?'

मुन्नू ने घुसते हुए पूछा: 'फूफाजी! माँ पूछती है, आप खिचड़ी खायेंगे कि रोटी?'

पीछे ही से कमला का स्वर सुनाई दिया: 'पूछा रे!'

वह स्वयं आगई थी।

कमला को देखकर गुट्टाजी ने कहा : 'बहू ! एक बात ध्यान में रखो ! औरत की बदचलनी से मर्द का नुकसान नहीं होता, होता है उसकी बदनामी से । झूँठी बात भी अगर घर से शुरू होजाये तो पड़ोसियों के लिये सच हो जाती है । समझीं ? अब हम लोग जायँगे ।'

'कब ?' कमला ने चौंक कर पूछा ।

'आज,' फिर कहा—'कल ।'

कमला सकते में पड़ गई उसकी दृष्टि नीचे गई । चेक-बुक के फटे कागज़ पर गई । गुट्टाजी की दृष्टि ने पीछा किया ।

'यह कैसे फटा पड़ा है यहाँ ?' गुट्टाजी ने कहा—'बहू ! उस दिन तुमने उठाकर नहीं रखी ?'

नीलिमा की आँखें चमक उठीं । उसने रहस्यभरी दृष्टि से पति को देखा । किंतु गुट्टाजी ने आँखें फिराली ।

कमला को काटो तो खून नहीं । कहा: 'बीबी ने नहीं रखी ?

'मैं क्यों रखती ?' नीलिमा ने कहा–'तुमने तो उल्टे मुझ पर नाम लगाया !'

'तो वह रकम तो बंक वालों की हुई !' गुट्टाजी ने कहा ।

कमला की आँखें फट गईं ।

नीलिमा ने सिर पीट लिया और कहा: हाय राम ! नाग भेज कर डसवा क्यों नहीं देता !

कमला कटे पेड़ सी वहीं बैठ गई ।

गुट्टाजी ने कहा : 'घबराओ मत ! घबराओ मत । ऐसे न

डूबने दूंगा रकम । मेरा भी नाम दुर्गापरसाद है । हाईकोर्ट तक मुकदमा लड़ूँगा । तुम मेरे रहते डरती हो बहू ! भगवान जानता है, मुझे झूंठ से नफरत है। पर एक बात तो बताओ। अब हम चले जायें तो तुम बच्चे के साथ रह तो लोगी ? डरोगी तो नहीं । तुम जानो । ज़माना भेड़िया है । तुम ठहरीं जवान !'

'तो तुम क्या ले चलोगे इन्हें ?' नीलिमा ने काटा। 'ऐसे ही भला किया था मुहर्रिर सा'ब थे न वे बाँके बिहारी ! नाम पड़ गया था घर में दो औरतें रखी हैं।'

'मगर', गुट्टाजी ने कहा—'किसी के कहने के डर से क्या इन्हें जमाने की ठोकरों के लिये छोड़ दूँ ?'

'और घर का क्या करोगे इसका ?' नीलिमा ने कहा।

'घर की क्या फिकर है नीलिमा।' गुट्टाजी ने कहा–'लड़के के नाम होजायेगा ? किराये पर उठ जायेगा ? न हो बहू, चाहे बिक जायेगा। भगवान ने इनसे तो सब छीन लिया। एक बच्चा ही तो है, वह बड़ा हो जाये। भगवान ने हमें भी कुछ नहीं दिया। चलो समझेंगे, पला पलाया लड़का मिल गया। एक बहू की रोटी क्या हमारे लिये भारी पड़ जायेगी? जो हम रूखासूखा खायेंगे सो वह भी खा लेगी ? गरीबी में तो गुजर करनी ही पड़ेगी !'

'लाला ! यहीं कौन सोहनहलुआ बदा है मुझे।' कमला ने आँखें पोंछकर कहा: 'तुम जो ठीक समझो करो ।' घर किराये उठा दो, बेच दो। मैं अकेली कहाँ रहूँगी। गाँव में भैया के जाऊंगी तो बच्चा क्या पढ़ेगा वहाँ । गमार रह

जाएगा। मेरा तो जो है सो यही है। बीबी इसे अपना समझलें तो मैं नौकरानी बन के पड़ी रहूँगी। भाभी की बात न सही जायगी मुझसे, ननद की जूती सह लूँगी। कुछ भी हो जिस घर से मेरी लाश निकलने का हक है, वही मेरा है।'

'ठीक कहती हो!' गुट्टाजी ने सोचते हुए कहा—'बुरा न मानना! सच कहता हूँ। झूँठ से मुझे नफ़रत है। भैया तुम्हारे ३००) ले गये, सो कुछ लौटाने की बात की है?'

'अरे,' नीलिमा ने कहा–'वहीं तो मैंने जो टोक दिया सो बुरी बन गई। अम्मा किसी की मानती थोड़े ही थीं। उन्होंने पिताजी के वखत ही हुकूमत करी हमेशा!'

'गुजरों को दोस क्यों देती हो?' गुट्टाजी ने काटा। 'हरद्वार में गङ्गा देख बोलीं—'उतर के नहाऊँगी। मैंने कहा किनारे पै नहालो लोटे से। पानी गँदला है तो क्या! है तो गंगा का ही। बीच में मगर हैं, कछुए हैं। बोली हँसकर, अब मर जाऊँगी तो भी क्या है? मैंने कहा: घर कौन सँभालेगा? बोलीं: तुम तो हो। मेरे रहते तुम्हें डर नहीं। पर बाद में आप ही लोकलाज के डर से अपने आप जूआ उठाकर काँधे पर धर लोगे और फिर मेरा ही हाथ पकड़ के उतरी गंगा में। दुपहर का सन्नाटा था। मैंने जो डुबकी लगाई और सिर निकाला तो देखा माजी गायब। खूब ढूंढ़ा। पुलस बुलाई। जाल डाला, मगर सब बेकार! जिसे गङ्गा मैया चुन ले उसे भागीरथ न उलीच पाये। जिद्द तो उनमें थी।'

नीलिमा ने सुना और कमला की ओर देखा। वह ऐसी खड़ी थी जैसे सामने एक तख्ता बहता आरहा था। कमला

यदि उसे पकड़ पायें तो शायद सागर तैर जायँ। पर चढ़ती-उतरती लहरों पर भरोसा कैसे किया जाये। जाने हाथ में आये या न आये।

मुन्नू इस समय खाट पर लेट गया था।

'इस बखत कैसे लेट गया यह ?' गुट्टाजी ने कहा।

'वैसे ही ; नीलिमा ने कहा: 'टैम भी खबर है। न खाया न पिया। दूसरों की चिंता में हमेशा डूबे रहते हो ! अब दुपहर होगई है !'

'अरे !' गुट्टाजी ने मुस्करा कर कहा, जैसे कोई ऊधम करते हुए बच्चा पकड़ा गया हो।

कमला ने रसोई की ओर बढते हुए कहा: 'बीबी ! अब दूसरा क्यों कहती हो ! पेड़ ही पंछी को देख कर उड़ने लगे तो पंछी घोंसला कहाँ बनायेगा ?

नीलिमा मुस्करा दी।

देर तक कमला न जाने क्या क्या सोचती रही।

जीवन का नया अध्याय प्रारंभ हो रहा था !

क्या यह कहीं किनारे लगा देगा ?

मन करता था वह अपनी घृणा को धो दे और पाँवों पर पड़कर कहे : तुम तो नन्देऊजी देवता हो।

परन्तु न जाने क्यों वह नहीं कह सकी।

उसने देखा गुट्टाजी सिर झुकाये बैठे थे।

बिचारे !

कितना बोझ आ गया है इन पर ?

उसके मन में वेदना सी भर गई।

गुट्टाजी का नम्रता से सिर झुका ही रहा और जब तीसरे दिन उन्होंने सिर उठाया, कमला का मकान बिक चुका था और गुट्टाजी के हाथ में साढ़े चार हज़ार रुपये और आ गये थे।

नीलिमा ने कहा : 'इतना रुपया फिर ले आये !'

'न ले आता तो किसे दे आता !'

बात हँसी में उड़ गई।

'मुझे तो बड़ा डर लगे ?'

'क्यों भला ?'

'पराई रकम ठहरी !'

'मन में गुंजायश रखो !' गुट्टाजी ने धैर्य्य से कहा, 'क्या पराया, क्या अपना ! लो बहू ! रख लो !'

नीलिमा ने देखा।

कमला ने जैसे सुनकर भी नहीं सुना।

'तुम्हीं से कहता हूँ।'

'ले लो बीबी।' कमला ने कहा।

'मुझे नहीं दे रहे हैं भाभी !'

'ले लो न बीबो ?'

तुम्हीं रखो भाभी !

'क्यों पूछ तो देखूँ ?'

'तुम्हारे हैं न ?'

'यह कैसा अपनापा है ?'

'नहीं बहू कहूँगा। हिसाब साफ़ भला।'

'तो मुझे कहाँ ले चलते हो ?'

'घर।'

'वहाँ मुझे कौन खिलायेगा ? तुम ही न ?'

'अरे हम खिलायेंगे ऐसे न हम राजेमहाराजे हो गये बहू। सब अपनी किस्मत का खाते हैं। भाग्य से ही संबंध बनते हैं, यह चाहना की बात नहीं, गुट्टाजी ने कहा : अरी रख ले। तू ही रख ले।'

नीलिमा ने कहा : 'ले तो लूँ। पर आगे की सोची है ?'

'कैसे ?' गुट्टाजी ने पूछा।

'लोग क्या कहेंगे ?'

'कह लेंगे' कमला ने कहा, जैसे कोई परवाह नहीं। बकने दो, उससे क्या होता है ?

नीलिमा ने कहा : 'मुझे डर लगता है।'

यह भी क्या बात थी ! अब कैसा डर ?

'किसका !' गुट्टाजी ने पूछा।

कमला ने चौंक कर देखा और कहा : 'विश्वास नहीं होता ?'

'भाभी का !' नीलिमा ने ऐसे कहा, जैसे उसने कमला की बात को सुनाही नहीं।

'मेरा !'

कमला भीतर ही भीतर सनसना गई।

'हाँ।'

'क्यों ?'

'तुम्हारी जवानी का।'

कमला जैसे पछाड़ खागई।

'तभी बहू को मैं यहाँ छोड़ते डरता हूँ।' गुट्टाजी ने कहा : 'हज़ार बुराइयाँ बेआसरा के साथ लगती हैं। टट्टी की ओट बनी रहे, परमात्मा साथ रहता है।'

नीलिमा ने कहा : 'भाभी मेरा घर छोड़ देना।'

कैसी कुत्सा थी !

गुट्टाजी हँसे। कहा : 'मेरी सरहज को छेड़े बिना न मानोगी तुम ?'

कमला विष सा पी गई। कहा : 'लाश को भी काटोगी। नन्दजी !'

गुट्टाजी का हास्य उथला हो गया, लगा अब हास्य नहीं, मुख से छटपटाहट निकल रही थी।

नीलिमा ने देखा, परिस्थिति समझी और हल्के स्वर से कहा : 'अरे मैं तो दिल्लगी करती थी।'

कमला का विक्षोभ शांत हुआ। पर गया नहीं।

भगवान का घर, और शैतान का सेंध लगाकर इंसान को लूटने की कोशिश में, अपनी जेब कटा जाना

'अरे मकान बेच दिया ?' परमेश्वर ने बैठते हुए कहा—'बैठिये सुरेशजी !'

सुरेश जी बैठ गये।

नीलिमा चौक में रही। खंभे की आधी सी ओट में कमला खड़ी थी।

'हाँ !' नीलिमा ने कहा : 'भाभी ने नहीं माना। हमने तो कहा भी रहने दो, पर वे बोली—'मैं यहाँ अकेली रहकर क्या करूँगी ?'

'आपका क्या विचार है सुरेश जी ?' परमेश्वर ने पूछा।

सुरेश जी मुस्कराये। कहा कुछ नहीं।

नीलिमा को बुरा लगा।

बोली : 'अब कोई कुछ समझे, हम क्या करें इसके लिये ?'

उसने फिर सुरेशजी की ओर।

उस धीर व्यक्ति ने धीरे से कहा : 'परमेश्वर भाई ! मकान रखा या बेच दिया, यह इनके घरलू मामले हैं, मुझे

और तुम्हें इससे क्या ? रिश्तेदार हैं, ये हैं ! मैंने जब रुपये इकट्ठे करवाये थे तब मेरे सामने राजनीतिक प्रश्न था। कार्य्यकर्त्ता जान दे, तो उसके लिये जनता और पार्टी क्या करे ! बस !'

वह एक शुष्क हँसी हँसा।

कमला ने उस सत्य को सुना तो लगा वह एक आदमी नहीं था, मशीन थी, जिसमें न स्नेह था, न ममता। केवल कर्त्तव्य था। तो इसने अपनी नाक रखने को यह सब करवाया था ! घर-गिरस्ती होती तो दया होती ! विवाहित मित्र की कोई-कोई पत्नी अपने पति के उस मित्र को पसन्द नहीं करती जिसके किसी प्रेम, दुराचार या व्यभिचार या मानसिक दुर्बलता का उसे पता नहीं चलता। उसे वह पाखंडी और अहंकारी समझती है। बहुधा स्त्री उस अडिग पुरुष को भी लंपट या ढोंगी मानती है, जिसका कहीं भी किसी स्त्री से संबंध नहीं मिलता, क्योंकि स्त्री प्रत्येक पुरुष को आँकने के समय अपने ही पुरुष का मानदण्ड सामने रखकर देखा करती है।

उसने कहा : 'सुरेशजी कैसे कष्ट किया।'

'हाँ, आया यों था,' सुरेश जी ने कहा : 'देश में दमन बढ़ रहा है और घर-घर में बेचैनी बढ़ती जा रही है।'

नीलिमा को लगा वह झूठी बात थी, क्योंकि उसमें कोई बेचैनी नहीं थी। काहे का झंझट है। अँगरेज राज ठीक तो कर रहे हैं फिर लड़ाई किस बात की है।

सुरेश जी कहते गये : 'तो स्त्री-संघ बन जाता तो इस नगर में एक नई लहर दौड़ सकती थी ! इसीलिये सोचा

था······लेकिन···अब तो शायद यहाँ से आप लोग चले जायेंगे, लिहाज़ा आप जिस नगर में जायें, आप चाहें तो हम वहाँ के कार्य्यकर्त्ताओं को लिख दें, वे आपसे मिलेंगे ?'

'नहीं,' कमला ने तिक्त स्वर से कहा : 'नन्देऊजी की नौकरी है वे क्या उनकी तरह थोड़े ही हैं। आदमी अपनी मर्ज़ी से मुसीबत में पड़ता है। हर एक में एक सी हौंस नहीं रहती। मरद वह जो पहले घर सँभाले। सो वे तो ऐसे ही हैं।'

अपने पति पर किया हुआ व्यंग्य उस दारुण वेदना से जन्मा था, जिसने उसके जीवन को विषमय और पंकिल कर दिया था।

'अच्छा तो मैं चलूँ।' सुरेश जी ने उठकर कहा : 'बहन ! इतनी जल्दी घबराने से कैसे काम चलेगा ! अभी तो बहुत लहू बहाना है।'

नेता चलने लगा। उसके उठने के बाद परमेश्वर ने नीलिमा को देखा। नीलिमा मुस्कराई। परमेश्वर भी।

'तुम चलोगे परमेश्वर भाई !'

'मैं जरा समझाता इन्हें !

'अच्छी बात है कोशिश कर देखो !'

सुरेश जी चले गये।

नीलिमा ने कहा : 'आगे पीछे कुछ नहीं।'

कमला चौक में आ गई।

इसी समय शशि ने प्रवेश किया और बोली : 'मुन्नू कहाँ है ?'

'मुन्नू ! तेरे घर ही तो गया है ?'

'नहीं तो !'

'वाह भाभी ! कहाँ चला गया वह ?' नीलिमा ने कहा।

'देखती हूँ।' वह बाहर चली गई।

जब वह लौटी तब देर सी हो गई थी। शीला ने जल्दी नहीं छोड़ा। उसने घर बिकने की सुनी तो बोली : 'बताओगी नहीं सब बात !'

'दुपहर ढले तुम आना !' कहकर कमला लौट आई। उसे जल्दी जो थी।

परमेश्वर बैठा था।

'बीबी कहाँ हैं ?'

'कह गई हैं, नहा आती हूँ, पूजा करनी है। अभी भाभी आती होंगी।'

'क्यों आपको मुझसे कुछ काम है ?'

'हाँ, नहीं।' परमेश्वर ने कहा : 'कुछ नहीं।'

कमला चुप खड़ी रही।

गीले बालों से टपकता पानी, साड़ी बदन पर लिपटी हुई। खंभे की ओट में से व्यंग्य भरा नीलिमा का स्वर सुनाई पड़ा : 'क्या हो रहा है ?'

परमेश्वर चौंक सा पड़ा।

नीलिमा हल्के से हँस दी। कमला को लगा पांवों के नीचे से धरती सरक गई।

अभी वह चकित सी खड़ी थी कि बाहर के द्वार पर श्री दुर्गाप्रसाद दिखाई दिये। वे ऐसे रहस्यमय नेत्रों से देख रहे थे कि कमला को मानों किसी ने भाला भोंककर अधर में

उठा दिया और वह भीतर ही भीतर कहती चली गई। किंतु अनावश्यक रूप से अकारण का यह सन्देह इतना विचित्र था कि वह समझ नहीं सकी कि क्या करे। नीलिमा ने आकर पति और परमेश्वर का परिचय कराया।

'अरे बड़ी खुशी हुई आपसे मिलकर,' गुट्टाजी ने बैठते हुए कहा। पहले रहस्यमय दृष्टि से कमला को देखा, फिर नीलिमा को, फिर जैसे अपने को तोला और तब देखा परमेश्वर को, और तदुपरांत एक अत्यन्त कृत्रिम मुस्कान उनके होठों पर फैल गई।

परमेश्वर को लगा वह अचानक ही जिस हरियाली को चरने के इरादे से घुस आया था, उसके चारों तरफ़ लोहे के काँटेदार तार खींच दिये गये थे, जिनका पहले उसे पता नहीं था। उसने कहा : 'देखिये ! हम समाज की सेवा करते हैं...

'अजी बलिदानी आदमी ठहरे !' गुट्टाजी ने दाद दी। 'हम तो सा'ब आप लोगों का तप त्याग देखकर हैरत में ही रह जाते हैं ! क्या करें ! भाई सा'ब ! ऐसी किस्मत ही नहीं लाये, क्या करें ? देके आये होते तो पाते !' फिर मुड़कर बोले : 'अजी सा'ब ! ये औरतें तो घर की दीवारों में बन्द रहती हैं। यह आपकी तपस्या क्या जान सकती हैं, हम देखते हैं, आप लोग कैसी-कैसी मुसीबतें उठाते हैं।'

परमेश्वर ने खीस निपोर दी।

यों बात कुछ नहीं हुई। जब परमेश्वर चला गया, तब गुट्टाजी ने टोपी उतार कर कहा : 'अब तो नहा लेना चाहिये

नहाने में भी बड़े गुन हैं। पानी सारा मैल धो देता है तन का, पैसा सारा मैल धो देता है समाज का, लेकिन मन का मैल कौन धोता है ?'

फिर वे मुस्कराये, जैसे कोई बड़ी रहस्यमय बात समझ गये हों।

कमला रसोई में से आई तो उसने आड़ से सुना : नीलिमा कह रही थी : 'कब तक चलना होगा अब ?'

गुट्टाजी ने पूछा : 'क्यों ?'

'मेरी तबियत ठीक नहीं।'

'ठीक से चलने न चलने से क्या सम्बन्ध है।'

'संबन्ध तो माने से होता है।'

'अरे जो होता है वह क्या किसी से रुकता है ?'

'रुकने वाला तो पलक मारते मौका निकाल ही लेता है।'

'लेने वाला क्या देने वाले की अकल के बिना कुछ ले लेता है ? तुम्हीं बताओ !'

'बताने में भी तो अपनी ही इज्जत जाती है।'

'इज्जत तो हयादार की है। जिसको पलक ने झपकना छोड़ दिया, उससे कौन जीते।

'जीते न जीते, मगर दुनिया दिखावा तो करना ही पड़ेगा।'

'पड़ लेगा। ऐसी चिंता क्या है ? जो करेगा ही वह खुले न करेगा, छिप कर करेगा। हम तो कहते हैं इसकी फिकर मत करो। तुम तो इसे जानती ही हो ! मैंने कभी कुछ कहा।

'कहने वाले भी तभी कहें जब अपनी चादर पर धब्बा न हो। फिर कोई किसी से क्यों डरे ?'

गुट्टाजी हँसे। बोले: 'यह कही है ! डरना एक चीज़ से चाहिए, जानती हो ? पाप से नहीं, बदनामी से। पाप का जबाव उस लोक में देना पड़ता है, इसका इसी में। परमात्मा समर्थ है। वह दण्ड दे तो उसमें क्या हानि ? सन्त परमात्मा भी उसके सामने तो कान पकड़के न हो पाँच उठक वैठक लगा ही देंगे, ऐसा दूध का धुला कोई नहीं। न सही, हम चार दिन मुर्गा बन लेंगे। लेकिन हमें दण्ड कौन देगा ? वह जो सबको देगा ! फिर सरम क्या ? राज के पिटे और कीचड़ के रपटे की शरण नहीं। वह हमारा भाई बाप ठहरा। आदमी का मन है। लोभ नहीं रुकता, संत महात्मा थोड़े ही हैं जो रोकलें, अरे संत भी डिग जाते हैं। पर डर तो समाज का है। यहाँ साला दो दो कौड़ी का आदमी बड़ा बोल सुनाता है। भगवान की मार से आदमी डरता है, खटकता है, मगर आदमी की मार से आदमी कीलों की सेज पर पटक कर अँगारों से जलाया जाता है। बताओ ! मैंने कभी टोका है ? ऐसा आदमी कभी पाया है तुमने ! और कोई होता तो वह सब चल पाता। उसके बाद नीलिमा का स्वर सुनाई दिया: गङ्गा नहाओ गङ्गा। संगम देख के जमना में भी गोता मत मारते चलो ! कह देती हूँ। अपने मन के दिए पर तुमने जो आँख को काजर सा पार रखा है न, इसे दूसरों के दीदे में लगाके उसे अन्धा मत बनाओ !

'अन्धा तो होवैही है छुछुँदर ! आफत तो साँप की है !

न निगलने का, न उगलने का।'

'उगले ब्याज वह रकम, जो मूल न गँवाया हो!'

'करमहीन तिब्याजा ले कै डूबै!'

'डुबाती नदी होती तो किनारे तोड़ के निकल जाती!'

'वह न डुबाये, मगर किनारे के पेड़ तो उसमें टूट-टूटकर आपसे आ गिरें! कोई कहाँ तक रोक सकै!'

'कोई किसी का मुँह नहीं रोक लेता। जैसा मन होगा वैसी ही बात होगी। जो दूसरों के सेंध लगायेगा उसे सपने में भी यही दीखेगा कि कोई मेरे घर भी सेंध लगा गया है! सुन लो, मैं नहीं डरती! यह न समझना मैं कुछ समझ नहीं रही हूँ।'

'अरे तो काहे को रार करती है, मैं क्या कुछ कहता हूँ! हल धरती में चलता है, चिड़ियाँ आसमान में उड़ती हैं।'

फिर बात बन्द हो गई। कमला वहीं दीवाल पर सिर टेके रह गई। मुन्नू अभी शीला के गया था।

गुप्ताजी ने स्नान करके कहा: 'सामान बाँधो। कल तो नया मालिक आजायेगा।'

'माँ! मैं शशि के यहाँ हो आऊँ!'

'अभी तो गया था!'

'अभी फिर जाऊँगा।'

'क्यों?'

'शशि कहती थीं फिर हम चले जायेंगे। आज एक बार और खेल आउँ!'

कमला ने देखी ममता। ममता के हज़ार दाँत !

कहा : जा !

थोड़ी देर बाद जब गुप्ताजी बाहर चले गये और नीलिमा भीतर थी, शीला ने आकर कहा : 'अच्छा ! अभी तक मिली भी नहीं !'

'आओ बहन !' कमला ने बिठाया।

'जा रही हो ?'

'हाँ।'

'कब आओगी ?'

'अब कैसा आना ?'

'हाँ घर जो बेच दिया है।'

'यही तो !'

'हमसे पूछा भी नहीं।'

'नन्देऊजी ने किया जो किया।'

'तुमसे नहीं पूछा !'

'पूछा था मगर मैं क्या बताती।'

'क्यों ?'

'वे ही मरद हैं। जो करें वही मानना ठीक है।'

'हाँ बहन ! भगवान औरत न बनाये।'

अचानक सुनाई दिया : 'कैसे मरद बनने की इच्छा हो रही है शीला बहन !'

शीला सकपका गई। कमला नीचे देखती रही। नीलिमा थी। उसने विचित्र दृष्टि से देखा।

शीला जैसे पकड़ी गई।

नीलिमा ने फिर कहा : 'ठीक कहती हो! औरत बनना ठीक नहीं। पाँव की जूती है। भगवान ने औरत बनाई, पर उसे मन दिया, यह अच्छा नहीं किया। उसका मन उसने इतना कमज़ोर क्यों बनाया !'

कहते हुए उसकी आँखें जैसे सुलग उठीं और होंठ विकृत हो गये ! उसने फिर कहा : 'जानवर बना देता वह ! घुटन तो न होती। झूंठ तो न होती ! शीला बहन ! औरत जितनी कमीनी होती है, मरद उसके सामने रत्ती भर भी नहीं होता ! वह मूरख होता है, उजड्ड ! घमंडी ! असल बदमाश औरत होती है !'

उसका यह रूप शीला और कमला दोनों के लिये विस्मय-कारक बन गया ! नीलिमा उसी सहज से आवेश में भीतर चली गई।

शीला ने कहा : 'देखी हैं मैंने ऐसी भी। दो एक बच्चा हो जाता तो दिमाग़ ठीक रहता। क्या बात है ? क्यों नहीं होता !'

स्त्री की सहज कुत्सा का गर्व जाग उठा।

नीलिमा ने न जाने कैसे सुन लिया। शायद वह जो गई हुई लगती थी, सो गई न थी, वहीं किवाड़ की ओट में रह गई थी। बोली : 'उनसे क्यों पूछती हो, मुझसे पूछो न शीला बहन !'

और फिर नीलिमा ने तुरन्त वज्र उठाकर मारा जिससे प्रचण्ड वन्हि घोर निनाद कर उठी। बोली : 'बाँझ हूँ !'

परन्तु दोनों स्त्रियों के मन को न जाने अगाध सागर के तल में भी आलोक किरन हाथ आई, वे मुस्करा दीं, आर्य्य-समाजी जैसे किसी को चिता पर धर कर आर्य्यत्व के दंभ में पुरोहित वेदों के मंत्र बोलता है, निरीह परन्तु अधंविश्वासी।

'पर भाभी यहाँ न रहेंगी। शीला बहन !' नीलिमा ने फ़ूत्कार किया : 'उनकी इज्जत हमारी इज्जत है। हम उन्हें संग ही ले जायेंगे !'

यहाँ तक तो ठीक था। पर शीला हठात् तिलमिला गई, जब नीलिमा ने कहा : 'तुम्हारे करवई के मदरसे में कोई कमी तो नहीं पड़ जायेगी ? क्या वहाँ सभी बेआसरा इकट्ठी होती हैं ?'

शीला ने कमला की ओर देखा। कमला ने कहा : 'बीबी शीला बहन हमारे घर आई हैं।'

'तो मैंने कहा ही क्या है भाभी ?'

'अच्छा मैं चलती हूँ।' शीला ने कहा।

'हाय क्यों जाती हो ! मैंने क्या कह दिया ? पर मैं तो यों कहती थी कि तुम्हारे मदरसे के लिये भाभी यहाँ कैसे छोड़ी जा सकेंगी ! इसमें बुरा मानने की भी कोई बात निकल आई !' फिर रुककर मुस्करा कर उसने कहा : 'शीला बहन, ब्याहता आसरा नहीं चाहती, उसको तो सब कुछ होता है ! होता है न ? मुझे देखो अपने को देखो !'

शीला ने उत्तर न देकर नीचे देखते हुए ही नमस्कार किया। कमला दूर तक पहुँचाने गई, परन्तु शीला ने कुछ बात नहीं की।

उसके जाने पर कमला लौट आई ।

नीलिमा ने कहा : 'बड़े मिज़ाज हैं इसके !'

किसके ?

तुम्हारी शीला के ।

क्यों ?

'कैसे तिनक कर चली गई, क्या कहा था मैंने ऐसा ? मदरसे वाली है न ? रोज नये-नये मरदों से काम पड़ै । जो औरत मर्दों से बहुत मिलै उसे नख़रे दिखाने की आदत पड़ जावै । पर भाभी ! क्या औरत भी कभी औरत के नखरे उठावै ! जो मैं इसकी बाँदी होती, तो जूती उठाती, पर नखरे तब भी न उठते ! पता नहीं, इनके मर्द नहीं हैं घर पर, जो सब यों ही देखा करें ।'

उसकी लड़ाका मुद्रा देखकर कमला भीतर ही भीतर काँप उठी । क्या इसी के संग जाना पड़ेगा ? परन्तु न जाने पर वह क्या करेगी ! भइया के यहां ? अरे वही भइया ! दुनिया के भाई बहनों को क्या नहीं देते । उसने क्या किया ? उल्टे ३००) लेजाकर नाक कटा गया ! पर सारे रुपये तो इन्हीं के हाथ हैं । उन्हें ले लूँ ! पर मुन्नू को कौन देखेगा ? और नन्देऊजी आदमी कहाँ हैं ? वैसा शांत तो कोई देवता ही हो सकता है ।

मन की घुटन उलझन बनी, फिर एक अंधेरा सा छागया, फिर अंधेरे की आँखों को आदत पड़ गई । और कोई चारा हो नहीं था ।

'बीबी ! खाना खालो !'

'अभी वे आये नहीं !'

'अब तो दुपहर हो गई ।'

'अभी तो देखोगे, वे ऐसा ही करते हैं ।'

'तब तो तुम बहुत सहती हो !' कमला ने झूठी ख़ुशामद की ।

नीलिमा प्रसन्न हुई ।

× × ×

इसके बाद कहानी ज़्यादा नहीं है ।

यह ख़त नीलिमा ने नीचे अपना नाम लिखे बिना पड़ोस में रहने वाले एक सुनार युवक, नाम बाँके को लिखा था । लिखावट ज़रा जान बूझकर तिरछी कर दी गई लगती थी । इस ख़त को बाँके ने न पढ़कर जला दिया था ।

मेरे प्यारे,

क्या बताऊँ बड़ी परेशान हूँ । पहले का आराम और चैन नहीं रहा । पहले तुम आते थे, चले जाते थे, कोई रोक टोक न थी, लेकिन अब तो घर में एक छोड़ दो मुसीबतें आ गई हैं । मैने बहुत टाला मगर एक न चली । वे ही ले आये । सच, कुछ और न समझना । एक बार तुम मुझसे शाम के बाद आज छत के उसी रास्ते से आकर मिलो । मैं उसे बच्चे के साथ किसी तरह मंदिर भेज दूँगी । बड़ी चालाक है यह ।

तुम्हारी ही,—

इस ख़त का जवाब नीलिमा को शायद नहीं मिला, तभी उसने फिर लिखा ।

मेरे प्यारे,

मुझसे नाराज़ होने की ज़रूरत नहीं है। आज वे मुझसे बातों ही बातों में कह रहे थे कि दुनिया बदल रही है। कोई स्त्री विधवा हो जाये तो वह क्यों ज़िन्दगी भर यों ही बैठी रहे! क्यों न वह फिर से ब्याह कर ले। वह तो सुनकर ऐसे हो गई जैसे किसी ने जलते तवे पर छींटे मार दिये हों। तुम ज़रा होशियारी से काम किया करो। छत पर तुम झाँके थे क्या? वह कहती थी—मुझे कोई घूर रहा था। मैंने डाँट दिया। मैं जानती हूँ तुम भले आदमी हो, पराई औरत पर निगाह न डालोगे। जरा संभाल कर जवाब रखा करो मौखुए में दवा के, जैसे मैं यहाँ रख ही रही हूँ।

तुम्हारी ही—

तीसरे दिन नीलिमा ने फिर लिखा—

मेरे बालम,

कितनी न राह दिखाई उस दिन, पर न आये। वह कहती थी मुझसे कि छत पर घूमने वाला आदमी मुझे मन्दिर में घूरता मिला था। यह कैसे हो सकता है? मेरे रहते तुम उससे रंगरेली नहीं कर सकते। मैं जानती हूं यह तुम्हारा कुसूर नहीं है, इसी राँड़ का है। दीदे फेंकती होगी, मुझसे पारसा बनती है। मैं इसकी चटनी बना दूँगी। इसे जूतियाँ लगा के बदनाम करके घर से निकालूँगी, गजब की बेशरम है। वे जरूर उसकी तरफ़ बोलते रहते हैं। मुझसे उसका बच्चा ऐसा डरता है कि पास नहीं आता। कमबखत को मारती भी हूँ, मगर यह डायन सरकती नहीं। हमें इससे कोई फ़ायदा नहीं। पूरा आधा सेर नाज खाती है। करती ही

क्या है ? झाड़ू बुहारी, चौका बर्तन, रसोई, कराडे थापना, बस ! मैं तुम्हारी याद में चौबीसों घंटे डूबी रहती हूँ । तुम तो अपने सारे वादे भूल गये । उस फकीर से दवा लाये जिसके बारे में कहते थे कि ऐसी भभूत देता है कि पत्थर पर फूल उगादे ! भगवान ने मुझे कहीं की न रखा ! ऊपर से यह ठगिनी आ गई है । वे हमेशा कहते हैं मुझसे कि देख, अभागिन पर जुलम न तेरी कोख न भरेगी । कहीं इसका पुरनविवाह करने की चिंता में हैं । हो जाये तो बला टले । पुराने अच्छे दिन लौट आयें जब हम तुम दोनों मिला करें उसी तरह से ।

तुम्हारी वही—

इसके बीस दिन बाद नीलिमा ने लिखा—

मेरे प्यारे—

यह तुमने क्या लिखा कि तुम्हें मेरी सूरत से नफ़रत हो जायेगी जो यह तुमसे न मिली । होश की दवा तो खाओ । मैंने प्रेम में सब किया था, कुलटा नहीं हूँ । उन्होंने इसका व्याह किसी से पक्का कर डाला है, शायद । तुम कहते हो तुम उस आदमी को जानते हो, वह बूढ़ा है, वे उससे ३०००) ले रहे हैं । चलो बला टली । सचमुच तुम्हारा मन मुझसे फिर गया है ?

तुम्हारी पुरानी—

इसके पाँच दिन बाद नीलिमा ने लिखा—

मेरे प्यारे,

तुम्हारा खत पढ़ा । तबियत खुश हो गई । हम तुम सदा एक हैं । आज वे घर ही हैं । कल से पुरारा खेल शुरू हो

जायेगा। उनके हाथ में ५००) पड़े, सो भी निकल गये। वह हरामजादी बड़ी चालाक थी। किसी तरह उसे पता चल गया कि ये उसे बेच रहे थे। न जाने किस तरह रात ही को अंधेरे में लड़के को लेकर चुपचाप भाग गई। उन्होंने शरम के मारे कहला दिया, कि मायके गई है, पड़ोस में। पर मुझे लगता है वह भाग गई। मिलना ज़रूर—

तुम्हारी वही—

इस खत के तीन दिन बाद श्री दुरगापरसाद ने यह खत कमला के भाई को गाँव के पते से लिखा—

श्री श्यामलाल को रामराम पहुँचे। आगे हाल यह है कि हमने कमला बहन को उनके हजारों रुपये देकर भेज दिया है। बात बड़े शर्म की है। उन्होंने यहाँ एक नौजवान से ऐसे ताल्लुक कर लिये जो हमारे खान्दान की शान के खिलाफ़ थे। लेकिन इसे तूल न दें। अपनी ही बदनामी है। आप मेरी राय मानें तो ऐसी औरत को किसी के सिर करदें, ज़माने में पुनर्विवाह चल रहा है। सुना था आप बहुत तंग भी थे। मै ऐसा आदमी ढूँढ़ सकता हूँ जो आपकी मदद को एक सहारा हो जायेगा। सोचकर जवाब दें।

आपका ही

दुरगापरसाद।

यह उत्तर श्यामलाल ने दुरगापरसाद को लिखा—

बाबू दुरगापरसाद को श्यामलाल की रामराम बंचना जी। आगे हाल यह है कि रुपया नहीं मिला वह कसम खाकर रोती है। वह कहती है आप उसे झूंठा इल्जाम लगाते हैं। हमारी हालत बहुत खराब है। उसकी भाभी ने काफी पूछा मगर रुपया वह नहीं बताती। लेकिन उसके पास तो

कुल ५) थे। सो वे रुपये जा भी कहाँ सकते हैं। उसकी भाभी बहुत घबड़ा रही है। जब से यह आई है गाँव के लुच्चे घर का चक्कर काटने लगे हैं। सूँसर फैल गई है कि यह भाग कर आई है। पता नहीं चलता। मेरी तो नाक कट रही है। ऐसे में दूसरा ब्याह हो जाता तो इज्ज़त रह जाती लेकिन अब क्या हो! वह तो सुनते ही मुझ पर टूट पड़ी। उसने अलग मकान चार आने महीने पर ले लिया है और पिसाई शुरू कर दी है। इधर उधर लड़के को लेकर लीपने भी चली जाती है।

रुपये का पता लगना जरूरी है। जवाब देंगे मैं तो दाने दाने को मुहताज हो रहा हूँ। उसने तो यहाँ आते ही एक आदमी को कूएँ पर मारा। भीड़ में से सबने ही उस मर्द को मारा। कहती थी छेड़ता था। ऐसी मर्दमार कैसे हो गई वह जाने। पता नहीं चलता। जिससे बोलती है, उसी पर टूट पड़ती हैं।

इस खत को पढ़कर नीलिमा की ओर देखकर दुर्गापरसाद सोचता रहा और फिर उसने पत्र नहीं लिखा। लेकित कुछ दिन बाद ही उसे एक पत्र मिला जिसे पढ़ कर उसकी भी आँखें फटी की फटी रह गईं।

बाबू दुरगापरसाद को श्यामलाल की रामराम वंचना। आगे हाल यह है कि कहा नहीं जाता। हम तो हार गये मगर उसके पास से एक पैसा नहीं निकला। हमारे गाँव के महंत चंदनदास बौहरगत भी करते हैं। जवान हैं पर बड़े नेम से रहते हैं। ऐसे आदमी हैं कि गाँव की किसी स्त्री से अकेले में नहीं मिलते। अद्धन्नी सैकड़ा ब्याज लेते हैं। उनके यहाँ हमारी

बहन एक बार लीपने गई थी। वहाँ रास्ते में किसी ठाकुर ने उसे रुपया दिखा दिया। उसने वह गालियाँ दीं कि वह ठाकुर भाग गया। उसी शाम को पता चला कि कमला ने पाँच हजार रुपया रसीद लेकर महन्त जी के यहाँ ब्याज पर चलाने को लगा दिया। अब ब्याज से अपना खर्च चलाती है और लड़के को लेकर अलग रहती है। हम पर तो उसे तनिक भी दया न आई। आपने ठीक कहा था कि रुपया उसके पास था। हमको भी महंतजी के जरिये नोटिस दे दिया है कि ३००) वापिस करो। आपको भी शायद नोटिस देगी कि आपने अभी तक उसका बंक का रुपया नहीं दिया। जवाब देंगे।

यह पत्र दुर्गाप्रसाद जी ने श्यामलाल को लिखा—

भाई श्यामलाल को दुरगा परसाद की राम राम पहुँचे। आगे हाल यह है कि हमने पहले ही कहा था कि रुपये वह ले गई थीं। बंक का उनका कौन सा रुपया है हम नहीं जानते। आप देख सकते हैं कि हमारे अपने रुपये रह गए हैं हमारे पास। हमको नोटिस देकर वे क्या ले लेंगी। आप उन्हें समझा दें। उनके बंक का हिसाब हमें नहीं मालूम। उनके मकान के बिकने के रुपये ज़रूर हमारे हाथ में आये थे, मगर वे उन्हें ले गई हैं। वही उन्होंने शायद महंत जी के जमा कराये होंगे। हमें बहुत अफसोस है कि वे आपकी मदद नहीं कर रही हैं। हमें भगवान ने इस लायक बनाया होता तो हम ज़रूर काम आते।

इस घटना के ६ वर्ष बाद महंत चंदनदास ने मुन्नू को यह ख़त लिखा था।

सिद्धि श्री महंत चंदनदास महाराज का मुन्नू को आशीर्वाद। आगे हाल यह है कि तुम अब जवान हो गये हो। तुम्हारे मामा ने हमसे आकर कहा था कि हम तुमको महंत की गद्दी के लिये चुन लें। तुम अब दसवाँ दरजा पास करके शहर में कालेज में पढ़ रहे हो। रुपया तुम्हारी माँ के पास है। हम ब्याज में से हिस्सा लेते हैं, रुपया देते हैं। यह तो व्यापार है। यों दुनिया में सब तरह के लोग हैं। वे पीछे पीछे बदनामी करें तो करें। उनको दण्ड भगवान देंगे। गरीब औरत का सहारा कोई नहीं होता। तुम्हारे फ़ूफा और मामा ने तुम्हारी माँ को लूटकर बरबाद कर देने की कोशिश की थी। बल्कि वे तो उसकी इज्ज़त को भी बेच देना चाहते थे। श्री जी ने हमें इस योग्य बनाया कि हम एक अबला की मदद कर सके। मगर इसमें हमने कोई अहसान नहीं किया, क्योंकि इसमें हमें मुनाफ़ा मिलता था। हाँ तो, बात यह थी कि तुम्हारे मामा ने जो गद्दी के लिए तुम्हारा नाम लिया, तुम्हारी माँ भी इससे कुछ प्रभावित हुई। लेकिन तुमने अंगरेज़ी पढ़ी है और हम समझते हैं तुम कुछ कमा कर अपने पाँवों पर खड़े हो सकते हो। तुम यहाँ रहोगे तो गाँव की पार्टी-बंदियों से टक्कर लेनी पड़ेगी, जो बड़ी गंदी चीज है। अब मैं ढल चला हूँ। क्योंकि मन थक गया है। अच्छा यही है कि तुम पढ़ लिखकर जल्दी तैयार हो जाओ और अपनी माँ को अपने पास रखो, उसकी सेवा करो। वह बहुत भली है और सीधी है। मेरी जिंदगी बहुत रूखी है। सब कुछ है, लेकिन महंत एक तरह का बलि का बकरा होता है। वह घर नहीं बसा सकता। मैं समझता हूँ आज़ादी और ग़रीबी ज्यादा अच्छी

चीज़ है । तुम महंताई रहने दो, सरकारी नौकरी करना । जब पास कर लोगो तब तुम्हारा मूल मैं वापिस कर दूँगा और तुम शहर में आराम से रहना । मैं भी अब किसी को गद्दी देकर अपना रुपया लेकर हरद्वार चला जाऊँगा । और बाकी समय श्री जी के ध्यान में बिता दूँगा । तुम्हारी माँ कहती है कि जब तुम लायक हो जाओगे तब वह मूल के ५०००) श्रीजी पर चढ़ा देगी और स्वयं, तुम्हारा ब्याह, करके, हरद्वार जाबसेगी और बस भगवान की ही सेवा करेगी । मैं समझता हूँ तुम्हें उसे रोकना चाहिये । मैं अकेला हूँ, पर उसके तो घर है, गिरस्ती है, वह क्यों सबकुछ त्याग दे ! स्त्री के लिये संसार छोटा है, पर बहुत गहरा है । मैं बहुत ऊब चुका हूँ । मैंने वेद-वेदांत का अध्ययन किया है । तुम नहीं जानते कि काशी का पढ़ा हूँ और मैंने संस्कृत के सैकड़ों ग्रंथ पढ़े हैं । यदि मैं अँगरेजी पढ़ा होता तो अवश्य ही मेरा भी नाम होता । लेकिन यह मेरे भाग्य में नहीं था ।

जो हो गया सो हो गया । सब कुछ उसी की मर्जी से होता है अतः सुख दुख करना व्यर्थ ही है । यह सारा ससार एक माया है । पर भगवान ने इसी माया के लिये माटी का रूप धारण किया था । इसीसे कहता हूँ कि गृहस्थ धर्म सर्वश्रेष्ठ है । इसमें सहज गति है, अहंकार नहीं; वैसे जीवन का बोझा ढोते हुए किसकी कमर नहीं झुकती ! तुम चिरायु हो । अच्छी तरह पढ़ना और अपना नाम निकालना ।

उन्हीं दिनों नीलिमा को गुड्डा जी ने यह पत्र लिखा था—

नीलिमा को आशीर्वाद । तुमने लिखा है कि कमला के बंक वाले रुपयों का बकस तुमने छिपाकर रख दिया है । मगर यह कैसी बात लिखती हो ? वह रुपये उसके कहाँ हैं ? वे तो

हमारे हैं ! अपनी तो दोनों रकम वह लेकर भाग गई थी। मैं तीर्थ स्नान करके शीघ्र आजाऊँगा। तुम घबराना नहीं। लल्ला की देखभाल करना। लल्ला के बाँके मामा से कहना कि वे जो गोटे की टोपी लाये थे वे वापिस करके दूसरी ले आयें। मैं लौटते में तुम्हारे मायके की तरफ़ से लौटूँगा। परमेश्वरजी अब बड़े नेता हो गये हैं और उनसे मेल जोल रखना अच्छा होगा ! लल्ला के लिए अभी से रास्ता बनाना अच्छा रहेगा।

इसके अतिरिक्त कोई पत्र नहीं, जिसका कोई विशेष महत्त्व हो। इसलिए उनका उल्लेख करना व्यर्थ है।

(सैकड़ों बरस पहले जो सुपना कबीर ने
देखा था, वह आज मैंने भी देखा।
पूछिये क्या था ? बताऊँ ?
मछलियाँ पेड़ों पर चढ़ गईं,
सिंह समुद्र पर झूलने लगे,
मछली जल में तड़पने लगी।
और पेड़ों पर वसन्त में कोंपलें
फूटने की जगह बिच्छू निकलने लगे।
फ़राऊन के सुपने को तो लोगों ने
सुलझा दिया था, लेकिन मेरा सुपना
कौन सुलझायेगा ???
वह सुलझा देगा जो बता
सकता है कि इन कोनों में घायल
फूल कौन था ??)